प्रथम पटलः

सपर्या-विधिः

कैलास-शिखरासीनं देवदेवं जगद्गुरुं[1] । उवाच पार्वती देवी[2] भैरवं परमेश्वरं ।

श्री पार्वत्युवाच[3]—देवदेव महादेव सृष्टि-स्थित्यन्त-कारक[4] । किं तद्-ब्रह्ममयं धाम श्रोतुमिच्छामि तत्वतः । कालिकाया महाविद्यां[5] समत-भेद-संयुतां । सपर्या-भेद-सहितां चतुर्वर्ग-फलप्रदां ।

श्री भैरव उवाच—महाविद्यां महामायां महायोगीश्वरीं[6] परां । सर्वविद्या[7] महाराज्ञीं सर्वसारस्वत-प्रदां[8] । कामत्रयं वह्निसंस्थं[9] रति-विन्दु-

प्रथम पटल का सारांश

पहले पटल में भगवती दक्षिणा काली के बाइस अक्षर के मन्त्र की पूजा बताई है, जो पशु और वीर दोनों भावों से हो सकती है । यथा—

कैलाश शिखर पर विराजमान महादेव से पार्वती ने पूछा—हे महादेव ! चतुर्वर्ग की फलदायिका ब्रह्म-स्वरूपा कालिका देवी की महाविद्या (अर्थात् महामन्त्र), उनके मन्त्र-भेद और उनकी विविध प्रकार की पूजा के सम्बन्ध में मैं सुनना चाहती हूँ ।

महादेव ने कहा—महामाया महायोगीश्वरी परब्रह्मस्वरूपा वह महाविद्या सब विद्याओं की महाराज्ञी है और सब विद्याओं की

पाठभेद—* १ जगत्पतिं, २ पप्रच्छ परया भक्त्या, ३ भैरव्युवाच, ४ सृष्टि-स्थिति-लयात्मक सृष्टि-स्थिति-प्रलयकारक, ५ महादेव्याः पूजां चैव विशेषतः, ६ योगेश्वरीं, ७ सर्वविद्यां, ८ सर्वैश्वर्य-फल-प्रदां, ९ वर्गाद्यं वह्नि-संयुक्तं ।

भूषितिंव[1] । कूर्चयुग्मं तथा लज्जा-युगलं तदनन्तरं । दक्षिणे कालिके चेति पूर्व-बीजानि चोद्धरेत् । अन्ते बह्निवधूं दद्याद् विद्या-राज्ञी प्रकीर्तिता ।

नात्र सिद्धयाद्यपेक्षाऽस्ति न वा मित्रारिलक्षणं[2] । न वा प्रयास-बाहुल्यं[3] न काय-क्लेश-सम्भवः । यस्याः स्मरण-मात्रेण जीवन्मुक्तो भवेरः[4] ।

देनेवाली है । क्रमपूर्वक तीन ककारों में रेफ, दीर्घ ईकार और बिन्दु का योग करने से तीन बीज होते हैं । उसके बाद दो कूर्च-बीज (हूँ), उनके बाद दो लज्जाबीज (ह्रीं), उनके बाद 'दक्षिणे कालिके' ये दो पद, इनके बाद क्रमपूर्वक पूर्वोक्त सातों बीज, उनके बाद अन्त में 'स्वाहा' का योग करने से दक्षिणा काली का बाइस अक्षर का मन्त्र होता है । यथा—

क्रींक्रींक्रीं हूँहूँ ह्रींह्रीं दक्षिणे कालिके क्रींक्रींक्रीं हूँहूँ ह्रींह्रीं स्वाहा ।

इस मन्त्र के सम्बन्ध में सिद्ध, साध्य, सुसिद्ध, आदि आदि चक्रों के विचार करने की आवश्यकता नहीं है और न ही इसकी उपासना में युगभेद के अनुसार चतुर्गुण जपादि जैसे अतिरिक्त परिश्रम अथवा योगादि का आश्रय लेकर शरीर को कष्ट देने की आवश्यकता होती है । इस मन्त्र का केवल स्मरण भर करने-जप-मनन मात्र से मनुष्य जीवन्मुक्त हो सकता है ।

पाठ-भेद—१ समन्वितं, २ नात्र चिन्ता-विशुद्धिस्तु नारि-मित्रादि-लक्षणं; नात्र चिन्ता-विशुद्धिर्वा नारि-मित्रादि-चिन्तनं, ३ न वित्त-व्यय-बाहुल्यं, ४ अस्याः स्मरण-मात्रेण सिद्धयोऽष्टौ भवन्ति हि ।

भैरवोऽस्य ऋषिः प्रोक्त उष्णिक् छन्द उदाहृतं [1] । देवता कालिका
प्रोक्ता[2] लज्जावीजं तु बीजकं ।* शक्तिस्तु कूर्चबीजं स्यादनिरुद्ध-सर-
स्वती । कवित्वार्थे नियोगः[3] स्यादेवं ऋष्यादि-कल्पना ।

अङ्गन्यास-करन्यासौ यथावदभिधीयते । षड्-दीर्घभाजा बीजेन प्रणवाद्येन
कल्पयेत् । हृद्याय नमः प्रोक्तं शिरसे वह्निवल्लभा । शिखायै वषडित्युक्तं
कवचाय हुमीरितं । नेत्रत्रयाय वौषट् स्यादस्त्राय फडिति क्रमः[4] । एवं
यथाविधिं[5] कृत्वा वर्णन्यासं समाचरेत् । वर्णन्यासं प्रवक्ष्यामि येन देवीमयो
भवेत् ।

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ वै हृदयं स्पृशेत्[6] । ए ऐ ओ औ
ततोऽप्यं अः क ख ग घ पुनस्ततः । उक्त्वा च दक्षिणं भुजं स्पृशेत् साधक-
सत्तमः । ङ च छ ज समुच्चार्य झ ञ ट ठ ड ढ तथा । इति वामभुजे
न्यस्य ण त थ द पुनः स्मरेत् । ध न प फ ब भ इति दक्षिण-जंघके
न्यसेत् । म य र ल व श ष स ह ल क्ष वामजंघके[7] । इति वर्णान्
प्रविन्यस्य मूलविद्यां समुच्चरन्[8] । सप्तधा व्यापकं कुर्याद् येन देवीमयो
भवेत् । व्यापकत्वेन संन्यस्य ततो ध्यायेत् परां शिवां ।

इस मन्त्र के ऋषि भैरव (महाकाल), छन्द उष्णिक्, देवता दक्षिण कालिका, वीज लज्जावीज (ह्रीं), शक्ति कूर्चवीज (हूँ), विद्या अनिरुद्ध सरस्वती (अर्थात् इसकी उपासना से अत्यधिक वाक्शक्ति प्राप्त होती है) और विनियोग कवित्वशक्ति के प्राप्त्यर्थ होता है ।*

'ॐ क्रां हृदयाय नमः; ॐ क्रीं शिरसे स्वाहा' इत्यादि सेरूप-अङ्गन्यास और करन्यास करे । फिर वर्णन्यास और व्यापक

पाठभेद—१ छन्दो वरानने, २ देवी, ३ कवित्वे विनियोगः, ४ च अस्त्राय फट् प्रकीर्तितं, ५ यथाविधं, ६ हृदये न्यसेत्, ७ इति वामके, ८ इति व्याप्त्या प्रविन्यस्य मूलविद्यां समुच्चरेत् ।

अधिकपाठः—* कीलकं चाद्य-वीजं स्याच्चतुर्वर्ग-फल-प्रदं ।

पीठन्यासं ततः कुर्याद् येन देवीमयो भवेत् । हृत्सरोजे सुधासिन्धु-मध्ये
द्वीपं सुवर्णजं । परितः पारिजातांश्च मध्ये कल्पतरुं ततः । तन्मूले हेम-
निर्माणं द्वाश्चतुष्टय-भूषितं । मण्डपं मन्दवातेन पराक्रान्तं सुधूपितं । मन्त्र-
तन्त्र प्रतिष्ठाप्य[1] तत्र पूजां समाचरेत् । श्मशानं तत्र सम्पूज्य तत्र कल्पद्रुमं
यजेत् । तन्मूले मणिपीठञ्च नानामणि-विभूषितं । नानालङ्कार-भूषाढ्यं
मुनिदेवैश्च भूषितं । शिवाभिर्बहु-मांसास्थि-मोदमानाभिरन्ततः । चतुर्दिक्षु शव-
मुण्डाश्चिताङ्गारास्थि-भूषिताः । इच्छा ज्ञाना क्रिया चैव कामिनी काम-
दायिनी । रती रतिप्रिया नन्दा मध्ये चैव मनोन्मनी । ह्सौः सदाशिवेत्यु-
क्त्वा महाप्रेतेति तत्परं । पद्मासनाय हृदयं पीठन्यास उदाहृतः । एवं देह-
मये पीठे चिन्तयेदिष्ट-देवतां । ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि स्मरणाच्छिवतां
व्रजेत् ।

न्यास करके पीठन्यास करे । हृदय कमल में सुधासागर, सागर के मध्य में रत्नद्वीप, द्वीप-मध्य में चारों ओर पारिजात वृक्ष, वृक्षों के मध्य में कल्पवृक्ष, उसके मूल स्थान में सुवर्ण के बने चार द्वारों से युक्त चिन्तामणि गृह, जिससे सुगन्ध फैल रही है । इसके बाद श्मशान, उसके मध्य में कल्पवृक्ष, उसके मूलस्थान में विविध प्रकार की मणियों से शोभित मणिमय पीठ, चारों ओर श्मशान के शव-मांसादि के भक्षण से तृप्त हुई शिवायें घूम रही हैं; शव मुण्ड, चिता के अङ्गार, हड्डियां आदि बिखरी हुई हैं । उसी मणिपीठ की आठ दिशाओं में १ इच्छा, २ ज्ञान, ३ क्रिया, ४ कामिनी, ५ कामदायिनी, ६ रति, ७ रतिप्रिया, ८ नन्दा—ये आठ शक्तियाँ और इनके मध्य में मनोन्मनी शक्ति विराजमान है । इन नौ शक्तियों के मस्तक पर महाप्रेतरूपी सदाशिव सो रहे हैं । इस प्रकार पीठ की कल्पना कर शवरूपी सदाशिव के ऊपर देवी का ध्यान करे ।

पाठ-भेद—१ मन्त्रैस्तत्र ।

करालवदनां घोरां मुक्तकेशीं चतुर्भुजां। कालिकां दक्षिणां दिव्यां मुण्डमाला-विभूषितां। सद्य श्छिन्नशिरः-खड्ग-वामाधोर्ध्व-कराम्बुजां। अभयं वरदञ्चैव दक्षिणोर्ध्वाध[1]-पाणिकां। महामेघ-प्रभां श्यामां तथा चैव दिग-म्बरीं[2]। कण्ठावसक्त-मुण्डाली-गलद्रुधिर-चर्चितां। कर्णावतंस-तानीत-शवयुग्म-भयानकां। घोरदंष्ट्रां करालास्यां पीनोन्नत-पयोधरां। शवानां कर-सङ्घातैः कृतकाञ्चीं हसन्मुखीं। सृक्क-द्वय-गलद्रक्त-धारा-विस्फुरिताननां। घोररावां महारौद्रीं[3] श्मशानालय-वासिनीं। बालार्क-मण्डलाकार-लोचन-त्रितयान्वितां[4]। दन्तुरां दक्षिण-व्यापि-मुक्तालम्बि-कचोच्चयां। शवरूप-महादेव-हृदयोपरि-संस्थितां। महाकालेन च समं विपरीत[5]-रतातुरां[6]। शिवा-भिर्घोर-रावाभिश्चतुर्दिक्षु समन्वितां। सुख-प्रसन्न-वदनां स्मेरानन-सरोरुहां। योगिनी-चक्र-सहितां कालिकां भावयेत् सदा।

भीषण श्मशान-भूमि, चारों ओर शिवायें भयङ्कर स्वर में चिल्ला रही हैं। इस प्रकार के श्मशान के मध्य में शवरूप महादेव के हृदय के ऊपर देवी स्थित हैं। देवी का दाहना पैर शव के हृदय पर और बायाँ पैर शव की दोनों जङ्घाओं पर रखा हुआ है। बिखरे हुये लम्बे-लम्बे केश देवी के दाहने अङ्गों को ढँके हुए हैं। तीन नेत्र नवोदित सूर्य के समान रक्तवर्ण के हैं। मुख भक्तों के लिए प्रफुल्लित कमल के समान आनन्ददायक और विकसित है परन्तु अभक्तों के लिए भयदायक, अनेक दाँत एक पर एक जमे हुए, सामने का दाँत उन्नत, जिह्वा लपलपाती हुई, ओठ के दोनों किनारों से पीने से बची हुई रक्तधारा के बहने से मुख शोभाय-

---

पाठभेद—१ दक्षिणाधोर्ध्वं, २ दिगन्दरां, ३ स्मितमुखीं, ४ मण्डला-कारां त्रिनेत्रामुन्नता-स्तनीं, ५ वै सार्द्धमुपविष्ट; सार्द्धं तामुपविष्टां; च सममुपविष्टां, ६ स्मरातुरां।

एवं सञ्चिन्तयेत् कालीं सर्वकामार्थसिद्धये[1]। अथार्चन-विधिं[2] वक्ष्ये देव्याः सर्व-समृद्धिदं। * येनानुष्ठित-मात्रेण स्वयं भैरव-रूपवान्। येनानुष्ठित-मात्रेण भवाब्धौ न निमज्जति। अनेक-हेमरत्नादि-माणिक्य-वर-सिद्धिदं। इन्द्रादि-सुर-वृन्दानां साधनैक-फलप्रदं। विपक्ष-कुल-संहार-कारणं पौरुष-ष्टदं[3]। शान्तिकं[4] पौष्टिकञ्चैव वशीकरणमुत्तमं। मारणोच्छेद-जनकमा-कृष्टि-करमुत्तमं[5]। समस्त-शोक-शमनमानन्दाब्धौ निमज्जनं[6]। चतुःसमुद्र-पर्यन्त-मेदिनी-साधनोत्तमं[7]। स्त्री-रत्न-कुल-सन्दायि पुत्र-पौत्र-विवर्धनं।

मान है; मुख पर हास्य का कुछ भाव है। दो मृत नर-शिशुओं से कान के भूषण हैं। चार हाथों में से—बाईं ओर नीचे के हाथ में तुरन्त का कटा हुआ नरमुण्ड और ऊपर के हाथ में नङ्ग खड्ग है; दाईं ओर ऊपर के हाथ में अभयमुद्रा और नीचे के हाथ में वरद मुद्रा है। गले में चरणकमलों तक लटकी हुई मुण्ड-माला है। इस माला में पचास नरमुण्ड हैं, जो एक दूसरे से केश द्वारा गुँथे हुए हैं। दोनों स्तन उन्नत और स्थूल हैं। कमर में वस्त्र नहीं है, किन्तु कटे हुए नर-कर-समूह द्वारा बनी हुई करधनी पहने हुए हैं। देवी का शरीर वर्षा करने को उद्यत काले बादलों के समान श्यामवर्ण का है और मुण्डमाला से निकलते हुए रक्त से रँगा हुआ है। वे शिव को नीचे लिटाकर उनके ऊपर नृत्य कर

पाठभेद— १ श्मशानालयवासिनीं; एवं सञ्चिन्त्य तां कालीं प्राणन्यासं समाचरेत्, २ अनुष्ठान-विधिं, ३ शरण-प्रदं, ४ शान्तिदं, ५ मारणोच्चाट-जनकं तथा- कर्षणमुत्तमं; मारणोच्छेदन-करं, ६ नन्दाब्धि-विधूदयं; नन्दादि-विभूतिदं; नन्दाब्धि-विभूतिदं, ७ पर्यन्तां धरित्रीं साधयेत्तथा,

अधिक श्लोक—*मानसैरर्चयित्वा तु साक्षात् सिद्धीश्वरो भवेत्। यन्त्र-पीठार्चनं वक्ष्ये देव्याः सर्व-समृद्धिदं।

आदौ यन्त्रं प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वाऽमरतां व्रजेत् । आदौ त्रिकोणं विन्यस्य त्रिकोणं तद्बहिर्न्यसेत् । ततो वै विलिखेन्मन्त्री त्रिकोण-त्रयमुत्तमं । वृत्तं विलिख्य विधिवल्लिखेत् पद्मं सुलक्षणं । ततो वृत्तं विलिख्यैव लिखेद् भूपुरमेककं । चतुरस्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत् ।

पीठपूजां ततः कृत्वा स्ववामेऽर्घ्यं न्यसेत् प्रिये[1] । मूलविद्यां षडङ्गेन मूलमन्त्रेण चार्चयेत् । ततो हृदय-पद्मान्तः स्फुरन्तीं परमां कलां । यन्त्र-मध्ये समावाह्य न्यास-जालं[2] प्रविन्यसेत् । ततो ध्यात्वा महादेवीमुपचारान् प्रकल्पयेत् [3] । नमस्कृत्य महादेवीं तत आवरणं यजेत् ।

कालीं कपालिनीं कुल्लां कुरुकुल्लां विरोधिनीं । विप्रचित्तां तु सम्पूज्य बहिः षट्कोणके ततः[4] । उग्रामुग्रप्रभां दीप्तां तथा मध्य-त्रिकोणके । नीलां

रही हैं । इससे प्रतीत होता है कि वे महाकाल के साथ विपरीत रति में आसक्त हैं । देवी भयङ्कर शब्द कर रही हैं अर्थात् अभक्तों के लिए उनका शब्द भयकारी है । उनका स्वरूप अत्यन्त उग्र है और स्थूल इन्द्रियों के परे है । धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—इस चतुर्वर्ग की सिद्धि के लिए दक्षिणा काली का ध्यान इसी प्रकार करे ।

अब देवी की पूजाविधि कही जाती है । इनकी पूजा करने से मोक्ष के इच्छुक व्यक्ति मुक्ति पाते हैं और भोग के इच्छुक लोगों को सभी कामनायें पूरी होती हैं ।

सबसे पहले पूजा के आधार 'यन्त्र' का कथन किया जाता है । पहले एक अधोमुख त्रिकोण बनावे । इस त्रिकोण को मध्य में रखते हुए इसके बाहर एक के बाद एक करके क्रमशः चार

पाठ-भेद—१ ऽर्घ्यं च विन्यसेत्, २ न्यासमेवं, ३ मुपचारैः प्रकल्पयेत्, ४ बुधः

घनां बलाकाञ्च तथैवान्य त्रिकोणके [1] । मात्रां मुद्रां मिताञ्चैव तथैवान्त-स्त्रिकोणके [2] । सर्वाः श्यामा असिकरा मुण्डमाला-विभूषिताः[3] । तर्जनीं वाम-हस्तेन धारयन्त्यः शुचि-स्मिताः[4] । ततो वै मातरः पूज्या ब्राह्मी नारायणी तथा * । माहेश्वरी च चामुण्डा कौमारी चापराजिता । वाराही च तथा पूज्या नारसिंही तथैव च । सर्वासामपि देवीनां बलिः पूजा तथैव च [5] । अनुलेपनकं गन्धो धूपदीपौ तथैव च[6] । त्रिस्त्रिः [7] पूजां प्रकर्तव्या सर्वासामपि साधकैः । गुरुपंक्ति षडङ्गञ्च दिक्पालांश्च ततोऽर्चयेत् ।

एवं पूजां पुरा कृत्वा मूलेनैव यथाविधि । नैवेद्यादीन्[8] यथाशक्त्या दद्याद् देव्यै पुनः पुनः । ततो वै दशावारांस्तु[9] दीपं दद्यात्[10]

त्रिकोण और बनावे । इस प्रकार पांच त्रिकोण हुये । ये सभी समबाहु त्रिभुज होंगे । इन त्रिकोणों को मध्य में रखते हुए इनके बाहर एक वृत्त, वृत्त के बाहर अष्टदल कमल, कमल के बाहर एक और वृत्त, वृत्त के बाहर चार द्वारों से युक्त चतुरस्र का भूपुर बनावे । (प्रथम त्रिकोण के ठीक मध्य में एक विन्दु और 'क्रीं क्रीं' इन दो बीजों को लिखे—ऐसा क्रम है, यद्यपि कालीतन्त्र में उल्लेख नहीं है ।) यही दक्षिणा काली का पूजायन्त्र है ।

इसके बाद पीठपूजा कर अपने बाईं ओर अर्घ्य-स्थापन करे । तब षडङ्गपूजा कर पुनः ध्यान करे । फिर हृदयकमल में

पाठ-भेद—१ तथापर-त्रिकोणके; तथैवापरके त्रिके, २ तथैवान्य-त्रिकोणके; न्यसेच्चान्य-त्रिकोणके, ३ विभूषणाः, ४ च सस्मिताः, ५ वै देयो बलिः पूजनमेव च, ६ गन्धं धूप-दीपौ क्रमात् तथा; गन्धं धूप-दीपौ च पानकं, ७ त्रिभिः, ८ नैवेद्यान्तं; नैवेद्यादि, ९ दश-वारं तु, १० दत्वा च ।

अन्य श्लोक—६ ततो वै मातरः पूज्याः पद्मेष्वऽष्ट-दलेषु च । तत्रादौ पूजयेद् ब्राह्मीं ततो नारायणीं तथा ।

साधकः । पुष्पादिकं पुनर्दद्यान्मूलेनैव यथाविधि । ततः सावहितो मन्त्री गुरुं नत्वा शिरः स्थितं । देवीं ध्यात्वा चाष्टोत्तर-सहस्रं [1] प्रजपेन्मनुं । तेजोमयं जपफलं[2] देव्या हस्ते समर्पयेत् । गुह्याति-गुह्य-गोप्त्री त्वमिति मन्त्रेण मन्त्रवित् । ततः शिरसि वै[3] पुष्पं दत्त्वाष्टाङ्गं प्रणम्य च ।

प्रकाशमान देवी का यन्त्र के मध्य में आवाहन कर उपलब्ध उपचारों से पूजन करे ।

तदनन्तर देवी को नमस्कार कर आवरण-पूजा करे । यथा—यन्त्र के पाँच त्रिकोणों के समस्त पन्द्रह कोणों में वामावर्त से क्रमशः १ काली, २ कपालिनी, ३ कुल्ला, ४ कुरुकुल्ला, ५ विरोधिनी, ६ विप्रचित्ता, ७ उग्रा, ८ उग्रप्रभा, ९ दीप्ता, १० नीला, ११ घना, १२ बलाका, १३ मात्रा, १४ मुद्रा, १५ मिता—इन १५ देवताओं की पूजा करे । ये सभी श्यामवर्ण की हैं । इनके दाहने हाथ में तलवार, बाएँ हाथ में तर्जनी अर्थात् ताड़न-यष्टि है, गले में मुण्डमाला और मुख पर मुस्कान है । इसके बाद १ ब्राह्मी, २ इन्द्राणी, ३ माहेश्वरी, ४ चामुण्डा, ५ कौमारी. ६ अपराजिता, ७ वाराही, ८ नारसिंही—इन आठ मातृकाओं की पूजा करे प्रत्येक देवता को अनुलेपन, गन्ध, धूप, दीप तीन-तीन बार प्रदान करे । तदनन्तर गुरुपंक्ति, षडङ्ग और इन्द्रादि दश दिक्पालों की क्रमशः पूजा करे

आवरण-देवताओं की पूजा कर चुकने पर मूलदेवता को पुनः यथाशक्ति नैवेद्यादि प्रदान करे । फिर गुरुदेव को प्रणाम कर मूलदेवता का ध्यान करता हुआ मूलमन्त्र का एक हजार पाठ बार जप करे । इसके बाद 'गुह्यातिगुह्य गोप्त्री' इत्यादि मन्त्र के द्वारा तेजोमय जपफल देवी के बाएँ हाथ में अर्पित करे । फिर

पाठ-भेद—१ शतं च, २ जप-जलं; जलं देव्या वाम, ३ ततो वै शिरसे ।

विसृज्य परया भक्त्या संहारेणैव भक्तितः[1] । उद्वास्य हृदये देवीं तन्मयो भवति ध्रुवं । पुरश्चरण-कालेऽपि पूजा चैषा प्रकीर्तिता ।

॥ श्री कालीतन्त्रे सपर्या-विधिः [2] नाम प्रथम पटलः ॥

मस्तक पर पुष्प चढ़ाकर अष्टाङ्ग प्रणाम कर संहार मुद्रा द्वारा देवी का विसर्जन करते हुये उन्हें अपने हृदय में ले आवे ।

पुरश्चरण-काल में भी इसी पूजा को करे ।

पाठ-भेद—१ सन्निधापन-मुद्रया, २ सपर्या-नियमः; सपर्या-पटलः

द्वितीय पटलः

पुरश्चरण-विधिः

भैरव उवाच—साधनं सिद्धमन्त्रस्य वक्ष्यामि परमाद्भुतं। भाग्य-हीनोऽपि मूर्खोऽपि यद्-बोधादमरो भवेत्। साधयेत् सकलान्[1] कामान् सर्व-सिद्धीश्वरो भवेत्। आदौ पुरस्क्रियां कुर्यान्नियमेन यथाविधि[2]। लक्षमेकं जपेद् विद्यां[3] हविष्याशी दिवा शुचिः। रात्रौ ताम्बूल-पूरास्यः[4] शय्यायां लक्षमानतः।

नानाचारो न कर्तव्यो न चारणमितस्ततः[5]। भूतहिंसा न कर्तव्या पशु-हिंसा विशेषतः। बलिदानं विना देव्या हिंसां सर्वत्र वर्जयेत्। अन्य-

---

द्वितीय पटल का सारांश

द्वितीय पटल में उल्लिखित मन्त्र के पुरश्चरण की आवश्यकता बताई है। जीवहीन शरीर के समान ही पुरश्चरणहीन मन्त्र भी किसी कार्य-साधन में समर्थ नहीं होता। पुरश्चरण के द्वारा मूर्ख व्यक्ति की भी सभी कामनायें पूर्ण हो जाती हैं। उक्त मन्त्र का एक लाख जप करने से पुश्चरण होता है। पशु-भाव में हविष्याशी और संयत रहकर प्रातःकाल से मध्या के मध्याह्न तक जप करे। वीरभाव में पञ्चमकार-युक्त होकर रात्रि में जप करे। विभिन्न आचारों में परायण न होना चाहिए, अर्थात् पशुभाव का साधक पश्वाचार से ही पुरश्चरण करे; वीराचार का अवलम्बन न करे। इसी प्रकार वीरभाव का साधक वीराचार

पाठ-भेद—१ सिद्धि-सकलान् साक्षात् सिद्धीश्वरो, २ समाहितः, ३ जपेंमन्त्री, ४ पूर्णास्यिः, ५ न चाचरणमिष्यते, न चाचारमितस्ततः।

मन्त्र-पुरस्कारं निन्दां चैव विवर्जयेत्। ततः सिद्ध-मनु-र्मन्त्री प्रयागार्हो न चान्यथा। जीव-हीनो यथा देही सर्व-कर्मसु न क्षमः। पुरश्चरण-हीनोऽपि तथा मन्त्रः प्रकीर्तितः। तस्मादादौ पुरश्चर्यां कृत्वा साधक-सत्तमः। प्रयोगं च ततः कुर्यात् सर्व-साधक-दुर्लभम्❀।

॥ श्री कालीतन्त्रे पुरश्चरण-विधिः नाम द्वितीय पटलः ॥

से ही पुरश्चरण करे। पुरश्चरण-काल में देवीपूजा-गत बलिदान के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार की प्राणिहिंसा न करे और न ही किसी की निन्दा करे। इस प्रकार के पुरश्चरण-द्वारा मन्त्र-सिद्धि प्राप्त कर उसके बाद शान्तिक, पौष्टिक, वशीकरण, उच्चाटन आदि प्रयोग करे। पुरश्चरण द्वारा मन्त्रसिद्धि लाभ किए बिना साधक मन्त्र-प्रयोग का अधिकारी नहीं होता।

पाठ-भेद— ❀ प्रयोगं च सदा कुर्यात् सर्व-विधि-विधानतः

तृतीय पटलः

नैमित्तिक-विधिः

भैरव उवाच—ततो होम-विधिं वक्ष्ये सर्व-सिद्धि-प्रदायकं । लता-पुष्पान्वितं कृत्वा पर्णानां शतकं सुधीः । तानि सम्मन्त्र्य विधिवदसकृत्[1] साधकोत्तमः । ततो वै होमयेत् तानि संस्कृतेऽग्नौ यथाविधि । युगानामयुतं तेन पूजनं जायते शिवे[2] । अनेन क्रम-योगेन यश्चरेद् भुवि साधकः[3] । न तस्य दुर्लभं किञ्चित् त्रिषु लोकेषु विद्यते । धीरो[4] भवति वाग्मी च सर्व-सिद्धिमुपालभेत् ।

हुनेदाज्येन भक्तेन मांसेन रुधिरेण च । कृष्ण-पुष्पेण साज्येन सरक्तेन विशेषतः । आमिषादिभिरप्येवं श्मशाने जुहुयात् सुधीः । महाकालं हुनेद् यत्नात् पश्चाद् देवीं विशेषतः[5] । त्रिधा विभज्य विद्यां वै साधकः शुद्ध-मानसः[6]। मांसं रक्तं त्वचं[7] केशं नखं भक्तञ्च[8] पायसम् । आज्यं[9] चैव विशेषण जुहुयात् सर्व-सिद्धये ।

एवं कृते तु सर्वत्र लभते सिद्धिमुत्तमां । यद् यत् कामयते कामी[10]

तृतीय पटल का सारांश

१ जप, २ होम, ३ तर्पण, ४ अभिषेक और ५ ब्राह्मण-भोजन—ये पाँच अङ्ग पुरश्चरण के होते हैं। इस पटल में जप, होम और तर्पण की विधि कही गई है। किन्तु अभिषेक और ब्राह्मण-

---

पाठभेद—१ विधि-वदाहृय, २ जायतेऽचिरात्; दक्षिणा पूजिता भवेत्; कालिका पूजिता भवेत्, ३ दुर्लभं; होमकं; होमतः, ४ मूको, ५ प्रयत्नतः; प्रपूजयेत्, ६ सिद्ध-मानसः, ७ तिलं, ८ भोज्यं च, ९ साज्यं, १० कामं

तत्तदाप्नोति निश्चितं । देव-वन्मानवो भूत्वा भुनक्ति बहुलं सुखं ।

तर्पणस्य विधिं वक्ष्ये येन कार्याणि साधयेत् । तर्पयेच्च पयोभिश्च रक्त-धारायुतैस्तथा । मज्जाभिश्च[1] तथा तद्वत् स्वकीयेन परेण[2] च । आकर्षितायाः कुल-प्रक्षालनेन च । मेष-माहिष-रक्तेन नर-रक्तेन चैव हि । मूष-मार्जार-रक्तेन तर्पयेद् देवतां परां ।

एवं तर्पण-मात्रेण साक्षात् सिद्धीश्वरो भवेत् । कविता जायते तस्य द्राक्षा-रस-परम्परा । वृहस्पति-समो भूत्वा देव-वद् भुवि मोदते । न तस्य पाप-पुण्यानि जीवन्मुक्तो भवेद् ध्रुवं ।

॥ श्री काली-तन्त्रे नैमित्तिक-विधिर्नाम तृतीय पटलः ॥

भोजन की चर्चा नहीं की गई है। होम और तर्पण की जो विधि दी है, वह वीरभाव की है; पशुभाव की विधि नहीं दी है। लता-पुष्प से युक्त विल्वपत्र घृत, चावल, मांस, रुधिर, कृष्णपुष्प आदि से श्मशान में होम करना होता है। इस प्रकार के होम से सब प्रकार की कामनाएँ पूर्ण होती हैं, अणिमादि अष्टसिद्धियाँ प्राप्त होती हैं; पाण्डित्य और वाक्सिद्धि मिलती है; रक्तधारायुक्त जल, स्वकीय अथवा परकीय मज्जा, शक्ति-कुल-प्रक्षालित जल, मेष-महिष-नर-मूषक-मार्जार आदि का रक्त—इनमें से किसी द्रव्य द्वारा तर्पण करने से भी पूर्वोक्त फल होता है। इस प्रकार की क्रिया से पाप-पुण्य का क्षय होकर साधक को जीवन्मुक्ति मिलती है।

पाठभेद—१ रेतोभिश्च, २ कचेन, करेण

चतुर्थ पटलः

कामना-विधिः

भैरव उवाच—अथ काम्य-विधिं वक्ष्ये येन सर्वत्र सर्वगः। साधकः साधयेत् सिद्धिं [1] देवानामपि दुर्लभां [2]। कुलागारं पुष्पिताया दृष्ट्वा यो जपते नरः। अयुतैक-प्रमाणेन साधकः स्थिर-मानसः। केवलं गुप्तभावेन स तु विद्या-निधिर्भवेत्। संस्कृताः प्राकृताः शब्दा लौकिका वैदिकाश्च ये [3]। वशमायान्ति ते सर्वे साधकस्य च नान्यथा। अथवा मुक्तकेशश्च हविष्याशी सुसंयतः [4]। प्रजपेदयुतं प्राज्ञ एतदेव [5] फलं लभेत्।

चतुर्थ पटल का सारांश

इस पटल में वीरभाव-सम्मत अनेक प्रकार की काम्य-विधियाँ बताई हैं। ये विधियाँ बड़ी रहस्यमयी हैं। इन्हें गुरुदेव से समझना चाहिए।

स्त्रियों को मारना या उनकी निन्दा करना मना है। उनके साथ कुटिल या अप्रिय व्यवहार नहीं करना चाहिए। स्त्री को ही देवता, स्त्री को ही प्राण और स्त्री को ही भूषण समझना चाहिए। स्त्री द्वारा लाये गये पुष्प, जल, भोज्य पदार्थों आदि से ही देवता की पूजा करे।

पाठभेद—१ सर्वं, २ दुर्लभं, ३ वैदिका अपि; वैदिकास्तथा, ४ हविष्यं भक्षयेन्नरः, ५ प्रजप्य चायुतं प्राज्ञस्तदेव हि

नग्नां पर-लतां पश्यन्नयुतं यस्तु साधकः। प्रजपेत् स भवेत् सद्यो विद्याया वल्लभः स्वयं। तस्य दर्शन-मात्रेण वादिनः कुण्ठतां गताः [1]। गद्य-पद्य-मयी वाणी तस्य वक्त्रात् प्रवर्तते [2]। तत्पदे [3] सुधियः सर्वे प्रणमन्ति मुदान्विताः। तस्य वाक्य [4]-परिचयाज्जडा भवन्ति वाग्मिनः [5]। अथवा मुक्त-केशश्च हविष्यं भक्षयेन्नरः। प्रजपेदयुतं तस्य एष प्रतिनिधिः स्मृतः।

धन-कामस्तु यो विद्वान् महदैश्वर्य-कामुकः। वृहस्पति-समो यस्तु भवितुं कामयेन्नरः [6]। अष्टोत्तर-शतं जप्त्वा कुलमामंत्र्य मन्त्र-वित् [7]। मैथुनं यः प्रयात्येव [8] स तु सर्व-फलं लभेत्। लता-रतेषु जप्तव्यं महा-पातक-मुक्तये। लतां यदि न लभ्येत तदा मज्जां [9] प्रयत्नतः। समुत्सार्य जपेन्मन्त्री सर्वं [10] कामार्थ-सिद्धये।

तासां प्रहारं निन्दां च कौटिल्यमप्रियं तथा। सर्वथा च न कर्तव्यमन्यथा सिद्धि-रोध-कृत्। स्त्रियो देवाः स्त्रियः प्राणाः स्त्रिय एव विभूषणं [11]। स्त्री-सङ्गिना सदा भाव्यमन्यथा स्व-स्त्रियामपि [12]। विपरीत-रता सा तु [13] भाविता हृदयोपरि। अष्टोत्तर-शतं जप्त्वा नासाध्यं विद्यते क्वचित्। तद्धस्तावचितं पुष्पं तद्धस्तावचितं जलं। तद्धस्तावचितं भोज्यं देवताभ्यो निवेदयेत्।

पाठभेद—१ निष्प्रभा मताः, २ प्रजायते, ३ तन्नाम्ना, ४ काव्य, ५ जड़ो भवति वाल्मीक, ६ कामयते स्वयं; भूत्वा कवित्वं कारयेत्तथा, ७ यत्नत, ८ करोत्येषः; प्रयात्येषः, ९ यदि न सङ्गच्छेत्तदा शुक्रं; यदि संसर्गस्तदा शुक्रं, १० धर्मं; ततो जप्यं सर्वं, ११ स्त्रियो देव्यः स्त्रियः पूज्याः स्त्रिय एव हि भूषणं, १२ स्व-स्त्रिया अपि, १३ रतासक्ता; मत्ता

महा-चीन-द्रुम-लता-वेष्टितः साधकोत्तमः । रात्रौ यदि जपेन्मन्त्रं[1] सैव कल्प-लता भवेत् । महा-चीन-द्रुम-लता वेष्टनेन च यत्फलं । तस्यापि षोडशांशेन कलां नार्हन्ति ते शवाः । शवासनाधिक-फलं लतागेह-प्रवेशनं । श्मशानालय-मागत्य मुक्त-केशो दिगम्बरः । जपेदयुत-संख्यं तु सर्व कामार्थ-सिद्धये ।

महा-चीन-द्रुम-लता-मज्जाभिविल्व-पत्रकं[2] । सहस्रं देवीमभ्यर्च्य श्मशाने साधकोत्तमः । तदा राज्यमवाप्नोति[3] यदि सा न पलायते । स्व-गात्र-रुधिरा-क्तैश्च विल्वपत्रैः सहस्रशः । श्मशानेऽभ्यर्च्य कालीं तु[4] वागीश-समतां व्रजेत् । अनादिकां तथा[5] दृष्ट्वा लक्षं जपति भूमिपः । निर्मलां[6] च तथा दृष्ट्वा वश्यार्थमयुतं जपेत् ।

॥ श्री काली-तन्त्रे कामना-विधिः नाम चतुर्थ पटलः ॥

पाठभेद—१ मन्त्री, २ पत्रकैः, ३ तु राज्यमाप्नोति, ४ देवीं च, ५ मूलविद्यां लतां; अनादितां तथा; अनुदितां यथा, ६ विमलां

पञ्चम पटलः

सिद्धविद्या-विधिः

भैरव उवाच—अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मन्त्रं कल्पद्रुमं परं । येन जप्तेन विधिवत् सिद्धयोऽष्टा भवन्ति हि । यस्याः स्मरण-मात्रेण वाचश्चित्रायते[1] नृणां । यज्ज्ञाना [2] दमरत्वं च लभेन्मुक्तिं चतुर्विधां । ये जपन्ति परां देवीं नियमेन तु संस्थिताः[3] । देवाः सर्वे नमस्यन्ति किं पुनर्मानवादयः ।

बृहस्पति-समो वाग्मी धने धनपतिर्भवेत् । काम-तुल्यश्च नारीणां रिपूणाँ यमनोपमः[4] । तस्य पादाम्बुज-द्वन्द्वं राज्ञा किरीट[5]-भूषणं । तस्य भूतिं विलोक्यैव कुबेरोपि तिरस्कृतः । य एनां पूजयेद् देवीं नियमे[6] पितृ-कानने । तस्य चाज्ञाकराः[7] सर्वे सिद्धयोऽष्टौ भवन्ति हि ।

पञ्चम पटल का सारांश

पहले पटल में दक्षिणा काली का बाईस अक्षर का जो मन्त्र बताया गया है, उसी की साधन-विधि चौथे पटल तक कही गई है । पाँचवें पटल में पन्द्रह और इक्कीस अक्षरों के दो मन्त्रों का उल्लेख हुआ है । यथा—

पाठभेद— १ मुक्तिस्तु जायते, २ यजना, ३ नियमेन शवे स्थितां; सदा देवीं नियमेन नर-स्थिता ; नियमेन नराः स्थिताः, ४ रिपूणामनलोपमः;रिपूणां च यमोपमः, ५ मुकुट, ६ तु यजेद्देवीं नियमे; चिन्तयेद्देवीं नियमे; चिन्तयेन्मंत्री नियतः, ७ तस्यैवाज्ञा-कराः

तस्यैव जननी धन्या पिता तस्य सुरोपमः [1] । सम्प्रदाय-विदां वक्ता य एनां वेत्ति तत्वतः । अस्या विज्ञान-मात्रेण कुल-कोटीः समुद्धरेत् । नंदन्ति पितरः सर्वे गाथां गायन्ति ते मुदा [2] । अपि नः स्वकुले कश्चित् कुल-ज्ञानी भविष्यति । स धन्यः स च विज्ञानी स कविः स च पंडितः । स कुलीनः सुकृती स वशी स च साधकः । स ब्राह्मणः स वेदज्ञः सोऽग्नि-होत्री स दीक्षितः [3] । स तीर्थ-सेवी पीठानां स निवासी स सर्वदः ।

स सोम-पायी स व्रती स यज्वा स च साधकः [4] । स संन्यासी च योगी च स मुक्तः [5] स च ब्रह्म-वित् । स वैष्णवः स शैवश्च स सौरः स च गाणपः । स च विज्ञान- वेत्ता च य एनां वेत्ति तत्वतः । तस्मात् सर्व-प्रयत्नेन सर्वावस्थासु सर्वदा । एनां ज्ञात्वा यजेन् [6] मन्त्री सुख-मोक्ष-फल-प्रदां [7] ।

नमः पाशांकुशे द्वेधा फट् स्वाहा कालि कालिके । दीर्घ-तनुच्छदः काली-मनुः पञ्च-दशाक्षरः । अनया सदृशी विद्या त्रैलोक्ये नापि विद्यते ।

---

१ नमः आं आं क्रों क्रों फट् स्वाहा कालि कालिके हूं ।

२ ॐ ह्रीं ह्रीं हूं हूं क्रीं क्रीं क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं ।

दूसरा मन्त्र 'विद्यारत्न' के नाम से प्रसिद्ध है । इसकी पूजा-विधि २२ अक्षर के मन्त्रवत् है ।

पाठ-भेद—१ तातस्तस्य शिवोपमः, २ सर्वदा, ३ सर्व-दीक्षितः; स च भूमिपः, ४ स व्रती सोम-पायी; स यज्वा स च दीक्षितः, ५ स सोम-पायी संन्यासी स योगी, ६ जपेत्, ७ महालयां; महाफलं

विद्या-रत्नं प्रवक्ष्यामि श्रुत्वा कर्णावतंस-वत् [1] । मायाद्वयं कूर्च-युग्ममैन्द्रान्तम् मादन [2]-त्रयं । माया-विन्द्वीश्वर-युतं दक्षिणे कालिके पदं । संहार-क्रम-योगेन वीज-सप्तकमुद्धरेत् । एक-विंशत् क्षराढ्यस्ताराद्यः [3] कालिका-मनुः । पूर्वोक्त-मन्त्र-वत् कुर्यात् पूजां सर्वां विचक्षणः ।

॥ श्री काली-तन्त्रे सिद्धविद्या नाम पञ्चम पटलः ॥

पाठ-भेद—१ श्रोतुः कर्णावतंसकं, २ मदन, ३ द्व्यः प्रोक्तोऽयं

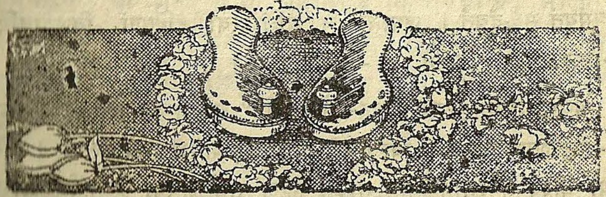

षष्ठ पटलः

वीर-साधना

भैरव उवाच—शृणु देवि वरारोहे वीर-साधनमुत्तमं। नृणां शीघ्र-फलावाप्त्यै प्रकारान्तरमुच्यते। चतुष्पथे चतुर्दिक्षु पुरुषं हृदयं खनेत्। जीवितं ब्रह्मरन्ध्रे वै दीपान् प्रज्वालयेत्[1] सुधीः। मध्ये तथा खनेदेकं तत्र मूर्द्धासनं[2] भवेत्। पूर्वोक्तेन च मार्गेण तत्र संस्कारमाचरेत्[3]। महा-कालादि-देवेभ्यो बलिं पूर्ववदाहरेत्। कल्पोक्त-पूजां संपूज्य जपेत् प्रयत्त[4]-मानसः। दंताक्ष-मालया चैव राज-दंतेन मेरुणा। दिग्वासाः प्रजपे-न्मन्त्रमयुतं सर्व-दैवतं। जपान्ते च बलिं दत्वा दक्षिणां विभवावधि। सर्व-सिद्धीश्वरो विद्वान् सर्व-देव-नमस्कृतः।

अथवा विजनेऽरण्ये स्थिर-योगासनो[5] नरः। उदयास्तं दिवा जप्त्वा सर्व-सिद्धीश्वरो भवेत्। विल्व-वृक्षे निज-क्रोड़े शवमारोप्य यत्नतः। नृसिंह-मुद्रया वीक्ष्य जपेन्मातृकया नरः। सहस्रं तत्र जप्त्वा वै सर्व-सिद्धीश्वरो

षष्ठ पटल का सारांश

इस पटल में अनेक प्रकार के वीर-साधन बताए हैं। पहले चतुष्पथ साधन का वर्णन है।

निर्जन वन में सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक जप करने से सब सिद्धियाँ मिलती हैं।

पाठभेद—१ लयेदिति, लयेद्दिशि, २ तथा मूद्रासनं स्तरेद, तत्र शुद्धा-सनं भवेत्, ३ मारभेत्, ४ नियत, ५ स्थिर शरयासनो; अस्थि शवासनो

भवेत्। वट-मूले शवं नीत्वा तत्र देवीं प्रपूज्य च। सूप्त्वा[1] तत्र मनुं जप्त्वा सर्व-सिद्धीश्वरो भवेत्। कर-काञ्चीं समादाय मुण्डमाला-विभूषितः। तेनैव तिलकं[2] कृत्वा तत्तद्भस्म-विभूषितः। श्मशाने च सकृज्जप्त्वा सर्व-सिद्धीश्वरो भवेत्। कुंकुमागुरु-कस्तूरी-रोचनागुरु-चन्दनं। कर्पूरं पद्मरागञ्च केशरं हरि-चन्दनं। एकत्र साधितं कृत्वा प्रत्येकं साधयेत्ततः[3]। एतत्तिलक-मात्रेण राजानं वशमानयेत्।

जिह्वाग्रे रुधिरं कृत्वा[4] आकाशे च समाहरेत्। तेनैव गुटिकां[5] कृत्वा भद्रकालीं ततो[6] जपेत्। नीलां नीलपताकां च ललज्जिह्वां करालिकां। ललाट-तिलकं कृत्वा साधको वीतभीः स्वयं। महाष्टमी-नवम्योस्तु संयोगे पुरतः स्थितः। छाग-महिष-मेषाणां चतुर्दिक्षु शरान् क्षिपेत्। कबन्धात्

शव-साधन के सम्बन्ध में बताया है कि मुण्डों की मालादि धारण कर यह फलप्रद किन्तु कठिन साधन करना होता है। प्राप्त तिलक-विशेष के द्वारा सिद्धिलाभ और लोगों का वशीकरण होता है।

१ भद्रकाली, २ नीला, ३ नील-पताका, ४ ललज्जिह्वा और ५ करालिका—इन पाँच देवताओं के मन्त्र बताकर लगुड़-साधन तथा अन्य वीर-साधन बताये हैं।

ये साधन योग्य और अनुभवी गुरु की प्रत्यक्ष देख-रेख में ही करने चाहिए। पुस्तक के सहारे ये साधन करने उचित नहीं हैं, इसी से यहाँ शब्दशः टीका नहीं की गई है।

पाठभेद—१ स्थित्वा, २ जिह्वाग्रे रुधिरं, ३ साधयेत्सुधीः, ४ वीर, ५ वटिकां, ६ तत्र काली-मनुं, ७ करालिनीं

मुण्ड-पुंजं च [1] दीपादिभिरलंकृतं [2] । मध्ये कबन्धमास्तीर्य तत्र मन्वर्व-रूप-धृक् । ताम्बूल-पूर-रक्तास्यमञ्जनाञ्चित-लोचनं । कृत्वा काली-मनुं [3] जप्त्वा सर्व-सिद्धीश्वरो भवेत् ।

वियद्वन्हि-युतं देवि नेत्रान्तं चन्द्र-भूषितं । बीजं प्रत्येक-द्रव्याणां मिलितानां च पार्वति । मूलमन्त्रेण मन्त्रं यो [4] जपेत् साष्ट-शत-त्रयं [5] । जिह्वाग्रे रुधिरं गृह्ण चामुण्डे घोर-निस्वने । वलिं गृह्ण वरं देहि रुधिरं गगनेऽमले । कालि कालि प्रचण्डोग्रे ततोऽस्त्रं [6] कवचं ततः । कालिकेयं समाख्याता वीराणां हित-काम्यया ।

कूर्चयुग्मं महादेवि नीलायाः कथितं तव । वियद्-भृगु-युतं देवि कल-मिश्रं रवी रतिः । चन्द्र खण्ड-समायुक्तं ततो नील-पदं ततः । पताके हूँ फडन्ते [7] स्यात् पूर्व कूट [8] मनुर्मतः । सुगुप्तेयं महा-विद्या तव स्नेहाद्-होदिता [9] । जयश्री-करणी [10] देवी पताकेव [11] रणस्थले तेन नील-पताकेयं विद्या वै वीर- [12] साधने । उग्र-चण्डा महाविद्या या पुरा कथिता प्रिये । ललज्जिह्वा तु सा प्रोक्ता योज्या वै वीर- [13] साधने । यासौ विद्या [14] महातारा सा करालेति कीर्त्तिता ।

भूमिपुत्र-समायुक्ता यामावास्या शुभोदया [15] । भाद्रे पुनृक्ष-योगेन [16] तस्यां वीर-वरोत्तमः । विष्णुक्रान्तां समानीय निक्षिपेन्मृत-भूमिषु । तत्र तां

पाठभेद—१ कबन्ध-मुण्ड-पुंजं च; कबन्धान् मुण्ड-पुञ्जादीन्, २ लंकृतः; लंकृतान्, ३ तत्र मनुं, ४ मन्त्रज्ञो, ५ सार्द्ध-शत-द्वयं; सार्द्ध-शत-त्रयं, ६ ततः फट्, ७ फडन्तं, ८ पूर्व-कूर्च, ९ न्मयोदिता, १० करिणी, ११ पताकेयं, १२ योज्या वै नीलं, १३ नील; मयोक्ता वै संयोज्या नील, १४ आदिविद्या; या सा विद्या, १५ शुभप्रदा, १६ पुष्कर-योगेन; पुष्यर्क्ष-योगेन

साधितां कृत्वा तद्दिने मत्स्य-हट्टके [1] । तत्र तं साधितं [2] मत्स्यमेक-मूल्येन दापयेत् । तज्जलेनाभिषेकं च पूर्ववच्च शिरोपरि [3] । साधितां विजयां तस्य उदरे मुख-वर्त्मना । क्षिप्त्वा तत्र खनेन्मत्स्यमञ्जनाञ्चित-लोचनः । पूर्व-द्रव्येण तिलकमुत्थाय [4] च मनुं जपेत् । स्वयं वै तत्र [5] भगवान् भैरवो लगुडान्वितः । गत-भीतिस्ततो वीरस्तं विलोक्य जपेन्मनुं । यदि भाग्य-वशाद् देवि लगुडस्तत्र लभ्यते । तदा स्वयं भैरवोऽसौ स्वयं वीरेश्वरो भवेत् ।

मत्स्यमानीय देवेशि निक्षिपेत् पितृ-कानने । तत्रासकृज्जपित्वा तु देवता-मेलनं भवेत् [6] । तत्र नत्वा महादेवं महादेवीं च भाविनि [7] । तद्-भस्म तिलकं कृत्वा स्वयं वीरेश्वरो भवेत् ।

निशायां मृत-हट्टे च उन्मत्तानन्द-भैरवः । दिग्वासा विमली भस्म-भूषणो मुक्त-केशकः । कपाली खड्ग-हस्तश्च जपेन् मातृकया यदि । तदा तस्य महादेवि सर्वसिद्धिः करे स्थिता [8] । डाकिनीं योगिनीं वापि अन्यं वा भूतलाङ्गनां । तत्राप्यानीय [9] संपूज्य सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ।

सर्वेषां जीव-हीनानां जन्तूनां वीर[10]साधने । ब्राह्मणं गोमयं त्यक्त्वा [11] साधयेद् वीर-साधनं । मृतासनं विना देवि पूजयेत् पार्वतीं शिवां । तावत् कालं वसेद् घोरे यावदाहूत-संप्लवं । महाशवाः प्रशस्ताः स्युः प्रधान [12] वीर-साधने । क्षुद्राः प्रयोग-कर्तृणां प्रशस्ताः सर्व-सिद्धिदाः । एवं

पाठ-भेद—१ मृत-हट्टके; मृत-सूतके, २ प्रसारितं, ३ शवोपरि, ४ तिलकं पूर्व-द्रव्येण उत्थाय; तिलको सर्व-द्रव्येण उत्थाय, ५ स्वयमायाति, ६ तत्र सकृज्जपित्वा तु देवतामिव लंघयेत्, ७ भामिनि, ८ प्रजायते, ९ तत आनीय, १० नील, ११ गोमये कृत्वा, १२ कालिका ।

वीर [1] क्रमं देवि कथितं चतवानघे । न कस्यचित प्रवक्तव्यं [2] मम [3] प्रीत्या महेश्वरि ।

॥ श्री काली-तन्त्रे वीर-साधना नाम षष्ठ पटल: ॥

पाठ-भेद—१ नील, २ प्रयोक्तव्यं, ३ तव

सप्तम पटलः

रहस्य पुरश्चरण-विधिः

देव्युवाच—ज्ञातमेतन्मया देव [1] त्वत्प्रसादान्महेश्वर । अशक्तानां तु मे देव पुरश्चरणमुच्यतां । सिध्यन्ते च यथा मन्त्रा लभन्ते सिद्धिमुत्तमां ।

भैरव [2] उवाच—श्मशाने च पुरश्चर्या कथिता भुवि [3] दुर्लभा । अथवान्य-प्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते [4] । कुजे वा शनिवारे वा नर-मुण्डं समाहृतं । पञ्च-गव्येन मिलितं चन्दनाद्यैर्विशेषतः । निक्षिप्य भूमौ हस्तार्धमानत कानने वने । तत्र तद्दिवसे रात्रौ सहस्रम् यदि मानव एकाकी प्रजपेन्मन्त्रं स भवेत्कल्प-पादपः ।

सप्तम पटल का सारांश

जो साधक विस्तृत पुरश्चरण-विधान करने में असमर्थ हैं, उनके लिए इस पटल में संक्षिप्त विधान बताए गए हैं—

१ मङ्गल या शनिवार के दिन एक नरमुण्ड लेकर पञ्चगव्य और चन्दनादि से उसका शोधन करे । फिर श्मशान में आधे हाथ का गड्ढा बनाकर उसे उसमें स्थापित करे । तदनन्तर उसके ऊपर आसन बिछाकर उसी दिन रात में एक सहस्र जप करने से सिद्धि मिलती है । (यह वीराचार-सम्मत है)

पाठ-भेद—१ ज्ञानमेतन्महादेव; ज्ञातमेतन्महादेव, २ भगवान्, ३ देवि, ४ मुच्यते ।

अथवान्य-प्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते [1] । शवमानीय तद्-द्वारे तेनैव परिखन्यते [2] । तद्दिनात्तद्दिनम् यावत्तावदष्टोत्तरम् शतम् । स भवेत्सर्व-सिद्धीशो नात्र कार्या विचारणा ।

२ मङ्गल या शनिवार के दिन एक शव को लाकर उसे प्रथम विधानोक्त नरमुण्ड के समान मिट्टी में स्थापित कर उसके ऊपर बैठकर एक मङ्गलवार या शनिवार से प्रारम्भ कर दूसरे मङ्गलवार या शनिवार तक प्रतिदिन रात्रि में एक सौ आठ बार जप करे, तो सिद्धि मिलती है। (यह भी वीराचार सम्मत है)

३ कृष्ण हो या शुक्लपक्ष—अष्टमी या चतुर्दशी को एक सूर्योदय से लेकर दूसरे सूर्योदय तक निर्भय होकर एकासन पर बैठकर जप करने से सिद्धि मिलती है। (यह पशु और वीर दोनों भावों से साध्य है)

४ चन्द्रग्रहण या सूर्यग्रहण में ग्रास से प्रारम्भ कर मोक्ष होने तक जप करे, तो सिद्धि मिलती है। इस पुरश्चरण में ग्रहण के बाद होम, तर्पण, अभिषेक और ब्राह्मण-भोजन करना होता है। (यह भी पशु और वीर दोनों भावों से सम्मत है)

५ शरत्काल के देवी पक्ष में चतुर्थी से लेकर नवमी तक प्रतिदिन भक्तिपूर्वक देवी की पूजा कर प्रति रात्रि में अन्धकार में अकेले बैठकर सहस्र बार जप करे। अष्टमी और नवमी को उपवास रखे। इससे मन्त्रसिद्धि होती है।

(यह-वीराचार-सम्मत है)

पाठ-भेद—१ मुच्यते, २ परिखन्य च

अथवान्य-प्रकारेण पुरश्चरणमुच्यते । अष्टम्यां च चतुर्दश्यां पक्षयोरुभयोरपि । सूर्योदयात् समारभ्य यावत् सूर्योदयान्तरं । तावज्जप्त्वा निरातङ्कः सर्व-सिद्धीश्वरो भवेत् ।

अथवान्य-प्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते । चन्द्र-सूर्य-ग्रहे चैव[1] ग्रासावधि-विमुक्तितः । यावत्संख्यं मनुं जप्त्वाताव[2] द्धोमादिकं चरेत् । सूर्य-ग्रहण-कालाद्धि नान्यः कालः प्रशस्यते [3] । तत्र यद्यत् कृतं कर्म तदनन्त-फलं[4] लभेत्[5] ।

अथवान्य-प्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते । शरत्काले चतुर्थ्यादि-नवम्यन्तं विशेषतः । भक्तितः पूजयित्वा तु रात्रौ तावत् सहस्रकं । जपेदेकाकी[6] विजने केवलं तिमिरालये । अष्टम्यादि-नवम्यन्तमुपवास-परो भवेत् । अन्यत्र गुरु मार्गस्य लंघनं नैव कारयेत् ।

अथवान्य-प्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते[7] । अष्टमी-सन्धि-वेलायामष्टोतर-शता-गृहं । प्रविश्य मन्त्री विधि-वत्ताः समभ्यर्च्य यत्नतः । पूर्वोक्त-कल्पमार्गाय पूजादिकं समाचरेत् । केवलं कामदेवोऽसौ जपेदष्टोत्तरं शतं । तासां

६ अष्टमी और नवमी के सन्धि-काल में एक सौ आठ युवती स्त्रियों की पूजा कर पूर्वोक्त विधि से देवी का अर्चन कर एक सौ आठ बार मन्त्र जप करने से सिद्धि मिलती है।

(वीराचार-सम्मत)

७ आकृष्ट शक्ति-मन्त्र में मन्त्र की भावना कर उसका पूजनादि संस्कार कर देव-भाव से मन्त्र-जप पूर्वक तत्पर हो। फिर विसर्जन कर नमस्कार पूर्वक जप करे। प्रातः स्त्रियों को भोजन करावे, तो निस्सन्देह सिद्धि मिलती है।

पाठ-भेद—१ चन्द्र-सूर्योपरागे २ च, जप्त्वा ताव; जपेन्मत्र ताव। ३ विशिष्यते, ४ सर्वमनन्त-फलदं, ५ अत्र यद् यत् कृ कर्म तदनन्ताय कल्पते, ६ देकस्तु ७ मुच्यते, ।

तु पत्र-मूलेषु उल्कां संगृह्य मस्तके [1] । मन्त्र-सिद्धिर्भवेत् सद्यो[2] लता-दर्शन पूजनात् ।

अथवान्य-प्रकारेण पुरश्चरणमुच्यते । आकृष्टायाः कुलागारे[3] लिखित्वा[4] मन्त्रमेव च । सम्पूज्य [5] तत्र संस्कारं कृत्वा तस्यै निवेद्य च [6] । किञ्चिज्जप्त्वा मनुं नीत्वा देवता-भाव-तत्परः । तां विसृज्य नमस्कृत्य स्वयं जप्त्वा सुसंयतः । प्रातः स्त्रीभ्यो बलिं दत्वा मन्त्र-सिद्धिर्न संशयः ।

अथवान्य-प्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते । गुरुमानीय संस्थाप्य देव-वत्-पूजनं विभोः । वस्त्रालङ्कार-हेमाद्यैः सन्तोष्य गुरुमेव च । तत्सुतं तत्सुतां चैव तत्पत्नीं च विशेषतः [7] । पूजयित्वा मनुं जप्त्वा स्वयं सिद्धीश्वरो भवेत् ।

अथवान्य-प्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते । सहस्रारे गुरोः पाद-पद्मं ध्यात्वा प्रपूज्य च । केवलं देव-भावेन जप्त्वा सिद्धीश्वरो भवेत् । गुरवे दक्षिणां

८ गुरुदेव को अपने घर बुलाकर इष्टदेवता-रूप में उनकी पूजा करे और वस्त्र, अलङ्कार, स्वर्णादि द्वारा उन्हें सन्तुष्ट करे । गुरु की पत्नी, पुत्र, कन्या की भी पूजा करे । इस प्रकार कर मन्त्रजप करे तो सिद्धि मिलती है ।✻

(पशु और वीर दोनों भावों से सम्मत)

९ सहस्रार में गुरुदेव के चरण-कमलों का ध्यान कर देवता-भाव से गुरुपूजा करते हुये मन्त्रजप करने से सिद्धि मिलती है । प्रत्येक क्रिया गुरुदेव की आज्ञा लेकर ही करे और उन्हें यथा-शक्ति दक्षिणा प्रदान करे । गुरुदेव की अनुमति मिलने से दुष्ट

पाठभेद—१ पद-मूलेन उक्त्वा संगृह्य कर्णके, पाद-मूलेन उग्रां सम्पूज्य यत्नतः, २ तस्य, ३ कान्ताः कति- लतागारे, ४ भावयेत्, ५ प्रपूज्य, ६ निवेदयेत, ७ तथैव च ।

✻ यहाँ जपसंख्या नहीं बताई गई है । ऐसी स्थिति में सदा एक सहस्र आठ बार जप करने का विधान माना जाता है

दद्याद् [1] यथा-विभवमात्मनः । गुरोरनुज्ञा-मात्रेण दुष्ट-मन्त्रोऽपि सिध्यति । गुरुं विलंघ्य शास्त्रेऽस्मिन्नाधिकारः सुरैरपि । एषां च मन्त्र-तन्त्राणां प्रयोगः क्रियते यदि । गुरु-वक्त्रं विना देवि सिद्धि-हानिः [2] प्रजायते ।

अथवान्य-प्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते । स्वकीयां परकीयां वा स्त्रियमानीय साधकः । शतमष्टोत्तरं जप्त्वा योनिमामन्त्र्य तत्व-वित् । गच्छन् परम-तत्वज्ञः सहस्रं जपते यदि । तदा मन्त्रो भवेत् सिद्धो दुष्ट-मन्त्रोऽपि पार्वति । एतत्प्रयोगं देवेशि न कस्मै दर्शयेत् क्वचित् । एतन्मन्त्रं च तन्त्रं च शिष्येभ्योऽपि न दर्शयेत् । यदि वा दर्शयेन्मोहात् कुबुद्धिः कुल-नाशकः । अन्यथा प्रेत-राजस्य भवनं याति निश्चितं ।

॥ इति श्रीकाली-तन्त्रे रहस्य-पुरश्चरण-विधिः नाम सप्तमः पटलः ॥

मन्त्र भी सिद्ध हो जाते हैं । गुरु की आज्ञा का उल्लंघन करने से तान्त्रिक क्रिया करने का अधिकार नहीं रहता । गुरु से उपदेश लिये बिना जो क्रिया करता है, उसे सिद्धि नहीं मिलती ।

१० स्वकीया और परकीया शक्ति की विधिवत् पूजा करने से सिद्धि मिलती है । इसकी विधि गुरुमुख से जाननी चाहिए ।

पाठभेद—१ दत्वा, २ नैव सिद्धिः, ३ तस्य जायते ।

अष्टम पटलः

आचार-विधिः

भैरव उवाच—अथाचारं प्रवक्ष्यामि यत्कृते [1] ऽमृतमश्नुते । सर्व-भूत हिते युक्तः समयाचार-पालकः । अनित्य-कर्म-सन्त्यागी नित्यानुष्ठान-तत्परः । मन्त्राराधन-मात्रेण शिव-भावेन[2] तत्परः । परस्यां देवतायां च सर्व-कर्म-निवेदकः । अन्य-मन्त्रार्चन-श्रद्धामन्य-मन्त्र-प्रपूजनं । कुल-स्त्री-वीर-निन्दां च तद्-द्रव्यस्याप-हारणं । स्त्रीषु रोषं प्रहारं च वर्जयेन्मतिमान् सदा ।

स्त्री-मयं च जगत्सर्वं स्वयं तावत् [3] तथा भवेत् । पेयं चर्व्यं तथा चोष्य भक्ष्यं भोज्यं गृहं स्वयं [4] । सर्वं च युवती-रूपं भावयेन्मतिमान् सदा [5] य

अष्टम पटल का सारांश

इस पटल में समयाचार अर्थात् कुलाचार का वर्णन हुआ है। समयाचार-परायण साधक सभी प्राणियों के कल्याण-कार्य में लगा रहता है, काम्य कर्मों को छोड़ देता है, नित्यकर्मों का अनुष्ठान करता है और मन्त्राराधना के द्वारा शिव-भाव में तत्पर रहता है। वह अपने सभी कर्मों को इष्टदेवता के अर्पण कर देता है; अन्य मन्त्र की पूजा, कुलाचार-निन्दा, स्त्री-निन्दा, वीर-निन्दा, वीर-द्रव्यापहरण, स्त्री पर क्रोध और प्रहार—ये सभी कर्म नहीं करता है।

पाठभेद—१ कृत्वा, २ भावन, ३ स्वयं चैव, ४ मुवं; शुभं, ५ स्वयं च युवती-रूपं भावयेद्-यतमानसः ।

कुब्जां युवतीं वीक्ष्य नमस्कुर्यात् समाहितः [1] । यदि भाग्यवशेनैव कुल-दृष्टिस्तु जायते [2] । दैव मानसीं पूजां तत्र तासां प्रकल्पयेत् । बालां वा यौवनोन्मत्तां वृद्धां वा युवतीमपि । कुत्सितां वा महादुष्टां [3] नमस्कृत्य विभावयेत् । तासां प्रहारं निन्दां च कौटिल्यमपि वर्जयेत् [4] । सर्वथा नैव कर्तव्यमन्यथा सिद्धि-रोध-कृत् ।

स्त्रियो देवाः स्त्रियः प्राणाः स्त्रिय एव विभूषणं । स्त्री-सङ्गिना सदा भाव्यमन्यथा स्व-स्त्रिया अपि [5] । विपरीत-रता सा तु [6] भविता हृदयोपरि । तद्धस्तावचितं पुष्पं तद्धस्तावचितं जलं [7] । तद्धस्तावचितं भोज्यं देवताभ्यो निवेदयेत् । सर्वं तदक्षयं प्रोक्तं देवता-पूजनात् प्रिये । विपरीत-रतासक्तोऽप्यष्टोत्तर-सहस्रकं । अष्टोत्तर-शतं वापि तदा सिद्धिः प्रजायते ।

इस जगत् को स्त्री-रूप में और स्वयं अपने को भी स्त्री-रूप में देखे। बालिका, युवती, वृद्धा, सुन्दरी, कुरूपा, दुष्टा इत्यादि किसी भी स्त्री-रूप को देखते ही मन ही मन उसकी पूजा कर उसे प्रणाम करे। स्त्री ही देवता है, स्त्री ही प्राण और स्त्री ही विभूषण है—इस प्रकार की चिन्ता करे। स्त्री द्वारा लाये हुए पुष्प, जल और भोज्यद्रव्यों द्वारा देवता की पूजा करने से अक्षय फल होता है।

अपने हृदय के ऊपर स्त्री के स्वरूप का ध्यान विपरीत रता दशा में करे। १००८ या १०८ बार जप करने से अभीष्ट फल प्राप्त होता है।

पाठ-भेद—१ सु-संयतः, २ दृष्टिः प्रजायते, ३ महा-नष्टां; तथा कुरूपां, ४ मप्रियं तथा, ५ स्व-स्त्रियामपि, ६ विपरीत-रतासक्ता, ७ पयः ।

स्त्री-द्वेषो नैव कर्तव्या विशेषात् पूजनं स्त्रियाः [1]। जप-स्थाने महाशंखं निवेश्योर्ध्वं जपं चरेत्। स्त्रियं पश्यन् स्पृशन् गच्छन् विशेषात् कुलजां शुभां [2]। भक्षन् ताम्बूल-मत्स्यांश्च [3] भक्ष्य-द्रव्यं यथारुचि। मत्स्यं मांसं तथा क्षौद्रं नाना-द्रव्य-समन्वितं [4]। भक्ताद्य-शेषभक्ष्याणि दत्वा द्रव्यं जपेन्मनुं। दिक्काल-नियमो नात्र स्थित्यादि-नियमो न च। सर्वथा पूजयेद् देवीमस्नातः कृत-भोजनः। महानिश्यशुचौ देशे बलिं मन्त्रेण दापयेत्। न जपे काल-नियमो नार्चादिषु बलिष्वपि। स्वेच्छा-नियम उक्तोऽत्र महा-मन्त्रस्य साधने। वस्त्रासन-देहागार-स्थान-स्पर्शादि-वारिणः [5]। शुद्धिं न चाचरेत्तत्र निर्विकल्पं मनश्चरेत्। सर्व एव शुभः कालो नाशुद्धिर्विद्यते क्वचित्। न विशेषो दिवा-रात्रौ न सन्ध्यायां महानिशि। नात्र शुद्धेरपेक्षास्ति न चामेध्यादि-दूषणं। सुगन्धि श्वेत-लोहित्य-कुसुमैरर्चयेद् दलैः। विल्वैर्मरुवकाद्यैश्च तुलसी-वर्जितैः शुभैः। नाधर्मो विद्यते सुभ्रु किं च धर्मो महान्

महाशङ्ख की माला में जप करे। यथारुचि मधु, मत्स्य, मांस, ताम्बूल और अन्यान्य द्रव्य खाकर विशेषकर कुलजा स्त्री का दर्शनादि कर जप करे।

इस आचार में जपादि के दिक्, काल और आसनादि के कोई नियम नहीं होते। बिना नहाये हुए और खा-पीकर महा-निशा में अपवित्र स्थान में देवी की पूजा और बलि प्रदान करे। सभी वस्तुओं को पवित्र समझे। किसी भी द्रव्य के शुद्धि-विधान की आवश्यकता नहीं है।

पूजादि के लिए सभी काल शुभ हैं। दिन, रात, सन्ध्या, महानिशा आदि में कोई भेद नहीं है। सभी समय जप

पाठभेद—१ कुलजां शुभां, २ भुञ्जानो मदनोद्गतः, ३ गन्ध-ताम्बूल-माल्यं च; भक्षंस्ताम्बूलमन्यांश्च द्रव्यान्, ४ भक्ष्य-द्रव्यान् यथाविधि, ५ बारिणां।

भवेत्। स्वेच्छाचारोऽत्र गदितः प्रचरेद् धृष्ट-मानसः [1]। कृतार्थं मन्यमानस्तु सन्तुष्टो हृष्ट-मानसः।

इत्याचार-परः श्रीमान् जप-पूजादि-तत्परः। पालकः कुल-तत्वानां परतत्वे प्रलीयते। उदिताकृतिरानन्द-मयः [2] संसार-मोचकः। अणिमाद्य-ष्ट-सिद्धीशः साधको देवता [3] भवेत्।

॥ इति श्रीकाली-तन्त्रे आचार-विधिः नाम अष्टमः पटलः ॥

और पूजादि किया जा सकता है। सुगन्धि, श्वेत-रक्त पुष्प, बिल्वपत्र आदि के द्वारा देवी की पूजा करे। तुलसी-पत्र के द्वारा पूजा न करे।

इस प्रकार के आचार में तत्पर होकर जो साधक जप-पूजादि करता है, वह आनन्दमय परतत्व में विलीन होता है। संसार में उसका पुनर्जन्म नहीं होता। अणिमादि अष्टसिद्धियाँ भी उसे प्राप्त होती हैं।

पाठभेद—१ शुद्ध-मानसः; भ्रष्ट-मानसः, २ मदिरानन्द-मानसः संसार-मोचकः सदा; मदिरानन्द-चित्तस्तु संसार-मोचकः सदा, ३ सिद्धी-श्वरश्च साधको।

नवम पटलः

विद्या-फल-विधिः

भैरव उवाच—एवं समस्त विद्यानां राज्ञी स्तोतुं न शक्यते। वक्त्र-कोटि-सहस्रैस्तु जिह्वा-कोटि-शतैरपि। सर्व-सिद्धि [1] परा भूमिरनिरुद्ध-सरस्वती। तस्मादस्या ज्ञान-मात्रात् सिद्धयोऽष्टौ भवन्ति हि। अनिरुद्ध-सरस्वत्या ज्ञान-मात्रेण साधकः। पाण्डित्ये च कवित्वे च वागीश-समतां व्रजेत्। तस्य पाण्डित्य-वैदग्ध्य-विचित्र-पद-कल्पनात् [2]। देवा अपि विलज्जन्ते किं पुनर्मानवादयः।

अस्ति चेत् त्वत्समा नारी मत्समः पुरुषोऽस्ति चेत्। अनिरुद्ध-सरस्वत्याः समो मन्त्रोऽस्ति वै तदा। अस्या जपो ब्रह्म-जपो ज्ञानमस्यात्म-चिन्तनं। योग-सन्धारणा सम्यग्ध्यानमस्या न संशयः। महापदि महापापे महा-ग्रह-निवारणे। महाभये महोत्पाते महाशोके महाभये [3]। महामोदे महाऽसौख्ये

नवम पटल का सारांश

इस पटल में अनिरुद्ध सरस्वती अर्थात् बाईस अक्षर के मन्त्र का फल कहा है। इस मन्त्र की साधना से सब सिद्धियाँ मिलती हैं। इस मन्त्र का ज्ञान प्राप्त कर साधक पाण्डित्य व कवित्व में बृहस्पति के समान होता है। इसका जप ब्रह्म जप, इसका ज्ञान आत्म-चिन्ता अर्थात् ब्रह्मचिन्ता और इसका सम्यक् ध्यान ही योग है। इस मन्त्र का स्मरण करने से महान् विपत्ति, महापाप, ग्रह-दोष, महाभय, महा उत्पात, महाशोक, महारोग, महामोह, महा दारिद्र्य आदि दूर होते हैं।

पाठभेद—१ सर्व-सिद्धेः, २ जल्पनात्, ३ महाजने; महोत्सवे।

महा-दारिद्र्य-संकटे। महारण्ये महाशून्ये महास्थाने [1] महारणे। दुराख्याने [2] दुराचारे दुर्भिक्षे दुर्निमित्तके। समस्त-क्लेश-संघाते स्मरणादेव नाशयेत्।

अस्या ज्ञानं ब्रह्म-ज्ञानं [3] ध्यानमस्यात्म-चिन्तनं। तस्मादस्याः समा विद्या नास्ति तन्त्रे न संशयः। श्मशान-शयनो वीरः [4] कुल-स्त्रीभिविहार-वान्। कुलामृत-निषेवी च काली-तन्त्रार्थ-चिन्तकः। ब्रह्मादि-भवने तस्य समो नास्ति कुतः परः [5]।

स एव सुकृती लोके स एव कुल-भूषणः। धन्या च जननी तस्य येन देवी समर्चिता। वक्त्रे सरस्वती तस्य लक्ष्मी स्तस्य सदा गृहे। तीर्थानि देहे तिष्ठन्ति येन देवी समर्चिता। धनेन धन-नाथश्च तेजसा भास्करोपमः।

जो साधक इस मन्त्र से देवी की अर्चना करता है, वही सुकृती और कुल भूषण है। उसकी जननी धन्य है। उसके मुख में सरस्वती, घर में लक्ष्मी और देह में तीर्थ-समूह सदा निवास करते हैं। धन में वह कुबेर-तुल्य, तेज में सूर्य-तुल्य, बल में वायु-तुल्य, गान में गन्धर्व-तुल्य, दान में कर्ण-तुल्य, ज्ञान में दत्तात्रेय-तुल्य, शत्रु नाश में अग्नि-तुल्य, पाप-नाश में गङ्गा-तुल्य, सुख-दान में चन्द्र-तुल्य और शासन में यम-तुल्य होता है। वह काल के समान दुरासद, समुद्र के समान गम्भीर, वृहस्पति के समान वक्ता, पृथ्वी के समान सहनशील और स्त्रियों के लिए कामदेव के समान होता है।

पाठभेद—४ महाज्ञाने, ५ दुराध्वाने; दुरासदे, ६ ज्ञानमेव, ७ श्मशाने शयी वीरः; श्मशाने वीर-शयनः, ८ ऽस्ति किमु चापरः।

बलेन [1] पवनो ह्येष येन देवी समर्चिता। गानेन तुम्बुरुः साक्षाद्दाने कर्ण-समस्तथा [2]। दत्तात्रेय-समो ज्ञानी येन देवी समर्चिता। वह्निरिव रिपोर्हन्ता गंगेव मल-नाशकः। शुचौ शुचि-समः साक्षादिन्दो [3] रिव सुख-प्रदः। पितृ-देव-समः शास्ता कालस्येव दुरासदः। वारीश इव गम्भीरो निर्घात इव [4] दुर्द्धरः। बृहस्पति-समो वाग्मी धरणी-सदृशः क्षमी। कन्दर्प-सदृशः स्त्रीणां [5] येन देवी समर्चिता।

अहो भाग्यमहो लोके कुल-ज्ञान-परायणः [6]। तेषां मध्येऽपि यः [7] कोऽपि काली-साधन-तत्परः। त्यजसि त्वं वरं चैतत् [8] पुमांसं परमं तथा। मादृशं [9] तु क्वचित् काले त्यजसि त्वं कदाचन [10]। काली ज्ञानिनमासाद्य न त्यजसि कदाचन। नहि काली-समा विद्या [11] नहि काली-समं फलं नहि काली-समं ज्ञानं नहि काली-समं तपः। ये गुणाः परमेशस्य पञ्च-

कुलज्ञान-परायण साधक दुर्लभ हैं, उनमें भी काली-साधक और भी दुर्लभ हैं। देवी शिव को भले छोड़ दें, किन्तु काली-साधक का परित्याग वे कभी नहीं करतीं।

काली के समान विद्या नहीं, काली के समान फल नहीं, काली के समान ज्ञान नहीं, काली के समान कोई तपस्या नहीं। परमेश्वर में जितने भी गुण हैं, वे सभी काली-तत्वज्ञान से साधक को प्राप्त होते हैं। लता-

पाठभेद—१ वेगेन, २ द्दानेन वासवो यथा, दैश्वर्ये वासवो यथा, ३ दिन्दु, ४ नृसिंह इव, निर्ऋतेरिव, ५ स्त्रीषु, ६ कुल-ज्ञानी भवेन्नरः, ७ मध्ये प्रियः; मध्ये च यः, ८ परं चैव, न कदाचित्, ९ महेशं, १० जगन्मये; शुचिस्मिते, ११ पूजा।

कृत्य-विधायिनः। ते गुणाः सन्ति सर्वज्ञे [1] काली-तत्वस्य नान्यथा। कालिका-हृदय-ज्ञानी लता-साधन-तत्परः। देववन्मानवो भूत्वा लभेन्मुक्तिं च शाश्वतीं [2]।

इति ते कथितं सम्यक् कालिका-तत्वमुत्तमं [3]। अनेन सम्यगास्थाय सर्व-धर्म [4] फलं लभेत्।

॥ इति श्रीकाली-तन्त्रे विद्या-फल-विधिर्नाम नवमः पटलः ॥

साधन तत्पर काली-तत्व-ज्ञानी साधक देव-तुल्य होकर क्रमशः मुक्ति लाभ पाता है।

काली-तत्व उक्त प्रकार का है। इसके प्रति समुचित रूप से आस्था रखते हुये साधना करने से सभी धर्मों का फल प्राप्त किया जा सकता है।

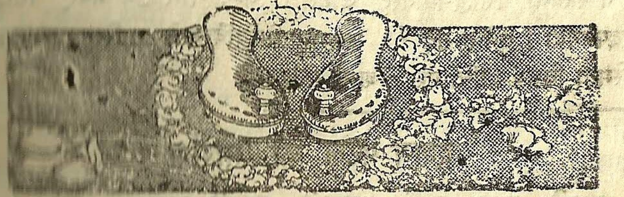

पाठभेद—१ सर्वज्ञि, २ चतुर्विधां, ३ काल्यास्तत्वमनुत्तमं, ४ सर्व-कामं।

दशम पटलः

सिद्ध-विद्या-विधिः

यथा काली तथा दुर्गा यथा दुर्गा तथोन्मुखी। यथा तारा तथा काली [1] यथा नीला तथोन्मुखी। दुर्गायाः कालिकायास्तु ध्यानं समिहोच्यते [2]। महाचीन-क्रमेणैव तारा शीघ्र-फल-प्रदा। गन्धर्वाख्य-क्रमेणैव पञ्चमी भुक्ति-मुक्तिदा [3]। महाचीन [4]– क्रमेणैव कालिका फल [5]-दायिनी। कालिकोग्र-मुखी शस्ता दत्तात्रेय-विभाविता [6]। सप्त-सप्तति-भेदेन [7] श्रीविद्या विदिता भुवि। तासां तु समता ज्ञेया गुप्त-साधन-साधने। चत्वारिंशत्-प्रकारा च [8] भैरवी परिकीर्त्तिता। तासां तु समता ज्ञेया गुप्त-साधन-साधने। या या [9] विद्या महाचण्डा तासामेष [10] विधिर्मतः। महाचीन [11]-क्रमेणैव छिन्नमस्ता च सिद्धिदा [12]। यस्मिन् मन्त्रे य आचारस्तस्मिन् [13] धर्मस्तु तादृशः। कृतार्थस्तेन जायेत स्वर्गो वा मोक्ष एव [14] वा। भ्रान्तिरत्र न कर्तव्या सिद्धि-हानिस्तु जायते। विशुद्ध-चित्तोऽत्र भवेत् सिद्धिः स्यादपवर्गदा। एवं तु तत् [15] क्षणात् सिद्धिर्विस्मयो नास्ति चापरः। विस्मिता विलयं यान्ति पशवः शास्त्र-मोहिता।

दशम पटल का सारांश

काली, तारा, दुर्गा, उन्मुखी—इनकी उपासना-पद्धति एक जैसी है। काली और दुर्गा को एक समान ही समझना चाहिए।

पाठभेद—१ नीला, २ सम्यगिहोदितं; सममिहोदितं, ३ भुवि दुर्लभा, ४ नील, ५ सिद्धि, ६ विभावना, ७ भेदा सा, ८ प्रकारेण, ९ महा, १० मेव, ११ नील, १२ विधिर्मत, विधिः स्मृतः, १३ तत्र, १४ स्वर्गं वा मोक्षमेव; मुक्तिरेव; मोक्षश्च एव, १५ एतत् तत्।

भैरव उवाच—कालिका-हृदयं विद्यां सिद्धि-विद्यां महोदयां। पुरा येन यथा जप्त्वा सिद्धिमापुर्दिवौकसः। कामाक्षरं वह्नि-संस्थमिन्दिरा-नाद-बिन्दुभिः। मन्त्रराजमिदं ख्यातं दुर्लभं पाप-चेतसां। सुलभं शुभदं [1] भक्त्या साधकानां महात्मनां। त्रिगुणा तु विशेषेण सर्व-शास्त्र-प्रबोधिका। अनया सदृशी विद्या नास्ति सारस्वत-प्रदा। आकर्षण-वशीकार-मारणोच्चाटनं तथा। शान्ति-पुष्ट्यादि-कर्माणि साधयेद्नात्ऽचिरात्। किं ब्रह्माननेनापि वर्णितुं नैव शक्यते। जिह्वा-कोटि-सहस्रैस्तु वक्त्र-कोटि-शतैरपि। अनया सदृशी विद्या अनया सदृशो जपः। अनया सदृशं ज्ञानं न भूतं न भविष्यति।

ध्यान-पूजादिकं सर्वं साधनं चपुरस्क्रिया। अनिरुद्ध-सरस्वत्याः समानं सर्वमीरितम् [2]। रक्तैराकर्षणे पुष्पैः पीतैः स्तम्भन-कर्मणि। मारणे कृष्ण-पुष्पैस्तु पूजयेद् घोर [3] दक्षिणां।

काली और तारा महाचीनक्रम से तथा श्री विद्या गन्धर्वक्रम से शीघ्र फल देती हैं। उग्रमुखी काली, सप्त-सप्तति प्रकार की श्रीविद्या और चत्वारिंशत प्रकार की भैरवी—गुप्तसाधन में ये सब समान हैं। उग्ररूपा सभी देवता महाचीन-क्रम से ही सिद्धि-दायिनी हैं। जिस मन्त्र के लिए जो आचार निर्दिष्ट है, उसी में विशुद्ध चित्त से तत्पर रहने से मुक्ति मिलती है।

दक्षिणा काली का एकाक्षर मन्त्र है—ककार-सहित रेफ, दीर्घ ईकार और नादबिन्दु (क्रीँ)। इस मन्त्र को 'कालिका-हृदय' कहते हैं। यही 'सिद्ध-विद्या' नाम से प्रसिद्ध है। उक्त एकाक्षर मन्त्र का तीन बार उच्चारण करने से त्र्यक्षर मन्त्र बनता है। इस मन्त्र से विद्या-लाभ, आकर्षण, वशीकरण, उच्चाटन, मारण, शान्ति, पुष्टि, आदि कर्म सिद्ध होते हैं। इन दोनों मन्त्रों के

पाठभेद—१ तत्र-तत्र; सुलभा, शुभदा। २ समं पूर्ववदाचरेत्; साधनं सर्वमीरितं; साधनं पूर्वमीरितं, ३ पूजयेदेव

आद्यैक-वीजं बीजानां तथैवान्तेऽपि चैककं [1] । दक्षिणे कालिके चेति मध्ये संयोज्य मन्त्र-वित् । स्वाहान्तं मन्त्रमुच्चार्य भवेदाकर्षणं महत् । लोहितांकुश-हस्तां च एक-शूल-धरां [2] तथा । महाकाल-समासीनां [3] ध्यात्वा चाकर्षणं महत् [4] । स्थावरं जङ्गमं चैव पाताल तलगं [5] तथा । आकर्षयति मन्त्रज्ञः किमन्यद् भुवि योषितः । अयुतैक-जपः प्रोक्तः सदाकर्षण-कर्मणि ।

अथान्यत् सम्प्रवक्ष्यामि वशीकरण मुत्तमं । कूर्च-लज्जा-द्वयं वीज-द्वयं ठान्तं [6] तथैव च । योजयित्वा जपेद् विद्यामयुतं [7] वशयेद् ध्रुवं [8] । ध्यान-मस्याः [9] प्रवक्ष्यामि येन वश्यं जगत्-त्रयं । नाग-यज्ञोपवीतां च चन्द्रार्द्ध-कृत-शेखरां । जटा-जूट-समासीनां [10] महाकाल-समीपगां [11] । एवं काम-

---

ध्यान, पूजादि सभी बाईस अक्षरवाले मन्त्र के समान ही हैं। इनका पुरश्चरण भी एक लाख जप से होता है।

आकर्षण में रक्त-पुष्प, स्तम्भन में पीत-पुष्प और मारण में कृष्ण पुष्प द्वारा काली की पूजा करे।

काली का षडक्षर मन्त्र इस प्रकार है—प्रणव, हल्लेखा, रति वीज, एकार-युक्त मकार, स्वाहा (ॐ ह्रीं क्रीं मे स्वाहा) इसे भी 'काली-हृदय' कहते हैं। इसके ऋषि महाकाल भैरव, छन्द विराट, देवता सिद्धकाली-ब्रह्मरूपा-भुवनेश्वरी*, वीज क्रीं, शक्ति ह्रीं है। 'ॐ ह्रां हृदयाय नमः' इत्यादिक्रम से अङ्ग-न्यास करे।

पाठभेद—१ अस्येकैकं तु बीजानां तथैवान्ते च चैककं; अद्यैकं तु बीजानां तथैवान्ते च एककं, २ मुलिहस्ता च एकशूलधरा, ३ कालासमासीना, ४ भवेत्; चरेत्, ५ लगता, ६ वीजं द्वयं चान्ते; वीज-द्वयं चान्ते; वीजं द्वयं चान्ते; वीजद्वायं चान्ते, वीजं द्वयं ठान्तं, ७ नियतं, ८ वश-कर्मणि, ९ मन्त्र; मन्त्रं, १० जटा-युक्तां च सञ्चिन्त्य, ११ समीपतः

* यह दक्षिणाकाली का ही एक स्वरूप है।

[illegible] [1] विह्वला काम-मोहिता [2] । स्वं स्वं सन्त्यज्य [3] भर्त्तारं याति लोक-त्रयाङ्गना [4] ।

अथ वक्ष्ये महाविद्यां सिद्धि [5] -विद्यां महोदयां । भैरवेण पुरा प्रोक्ता [6] काली-हृदय-संज्ञिता [7] । अस्या ज्ञान-प्रभावेण कलयामि जगत्त्रयं । प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य [8] हल्लेखा-वीजमुद्धरेत् । रति-वीजं समुद्धृत्य [9] [illegible]-भगान्वितं । ठ द्वयेन समायुक्ता विद्या-राज्ञी मयोदिता [10] । अनया षडक्षरी विद्या कालिकायास्तु दुर्लभा ।

भैरवोऽस्य ऋषिः प्रोक्तो विराट् छन्द उदीरितं [11] । सिद्ध-काली महा-रूपा देवता भुवनेश्वरी । रति-वीजं वीजमस्या हल्लेखा शक्तिरुच्यते । हल्लेखया षड्-दीर्घेन प्रणवाद्येन कल्पयेत् । अङ्ग-षट्कं ततो न्यस्य ध्यात्वा देवीं सिद्धो भवेत् ।

[illegible]-न्नेन्दु-बिम्ब-स्रवदमृत-रसाप्लाविताङ्गी त्रिनेत्रा । सव्ये पाणौ कपालाद् गलदमृत [12] मथो मुक्त-केशी पिवन्ती । दिग्वस्त्रा बद्ध-काञ्ची मणि-मय-मुकुटाद्यैर्युता दीप्त-जिह्वा । पायान्नीलोत्पलाभा रवि शशि-विल-[illegible]-लीढ़ पादा ।

जपेद् विंशति-साहस्रं सहस्रैकेण संयुतं । होमयेत्तद्दशांशेन मृदु-पुष्पेण [illegible] । त्रिकोणं कुण्डमालिख्य [13] सिद्धविद्यः शिवो भवेत् । पूजनं [illegible] च दक्षिणावदुपाचरेत् । एकाक्षर्या महाकल्प-समानं सर्वमेव वा ।

देवी का स्वरूप इस प्रकार है—शवरूप महा देव के ऊपर [illegible], महादेव के हृदय पर बायां पैर और दोनों जङ्घाओं पर दायां पैर। नील कमलवत् नील वर्णा । द्विभुजा—दायें हाथ में [illegible] और बायें हाथ में पानपात्र कपाल। दायें हाथ में स्थित

पाठभेद—१ काम-समा विद्या; काम-समाबिद्धा, २ निर्लज्जा विक्लवाः [illegible], ३ स्वयं संगृह्य, ४ आलिङ्गन्ति सदैव तं, ५ सिद्ध,- ६ प्रोक्तां, ७ संज्ञिता, संज्ञितां, ८ मुद्धार्य, ९ समुच्चार्य, १० प्रकीर्तिता; महोदया, ११ [illegible], १२ दसुज, १३ मासाद्य ।

रक्त पद्मस्य [1] होमेन साक्षाद् वैश्रवणो [2] भवेत् । बिल्व-पत्रस्य होमेन राज्यं भवति [3] निश्चितं । रक्त-प्रसून-होमेन वशयेदखिलं जगत् । पीत-पुष्पस्य होमेन स्तम्भयेद् वायु [4] मप्यथ । मालती-पुष्प-होमेन साक्षाद् वाक्-पति-सन्निभः । कृष्ण पुष्पस्य होमेन शत्रून् मारयतेऽचिरात् । अत्र सर्वस्य होमस्य [5] संख्या स्यादयुतावधि ।

अस्या स्मरण-मात्रेण महा-पातक-कोटयः । सद्यः प्रलयमायान्ति साधक खेचरो भवेत ।

॥ इति श्री काली-तन्त्रे सिद्ध-विद्या-विधिः नाम दशमः पटलः ॥

ऊर्ध्व-मुख खड्ग द्वारा उद्भिन्न चन्द्र-मण्डल से गिरती हुई अमृत-धारा देवी के सारे शरीर को आप्लावित कर रही है। बायें हाथ में स्थित कपाल से अमृत-पान करती हैं। त्रिनेत्रा, मुक्तकेश, दिगम्बरी और ललज्जिह्वा हैं। कमर में नर-कर-समूह की काञ्ची दोनों कानों में चन्द्र और सूर्य दो कुण्डल सुशोभित है। शोभमान हैं। मणिमय मुकुट आदि द्वारा देवी का शरीर

इस षडक्षर मन्त्र का पुरश्चरण इक्कीस सहस्र जप से होता है। त्रिकोण कुण्ड में इसका दशांश अर्थात् इक्कीस सौ होम करे। पूजा क्रम दक्षिणा काली के एकाक्षर मन्त्रवत्। इस मन्त्र से रक्त पद्म द्वारा होम करने से साधक कुबेर के समान धनी होता है। बिल्वपत्र के होम से राज्य-लाभ, रक्त-पुष्प के होम से जगद्वशी-करण, पीत-पुष्प के होम से स्तम्भन, मालती-पुष्प के होम से बृह-स्पति-तुल्य विद्यालाभ और कृष्णपुष्प के होम से शत्रु का मारण होता है। इन सभी होमों में संख्या दस हजार है। इस मन्त्र की साधना से महापापों का नाश होकर साधक नभ-चर होता है।

* * *

पाठभेद—१ पुष्पस्य, २ वैश्वानरो, ३ प्राप्नोति, ४ वह्नि, ५ सर्वेषु होमेषु ।

एकादश पटलः

सामान्य साधनं

भैरव उवाच—अथोच्यते कालिकायाः सामान्य-साधनं प्रिये । कृतेन येन विधिवत् पालयन्ते महापदः । शिवा-बलिश्च दातव्यः सर्व-सिद्धिमभी-प्सुभिः ।

महोत्पाते महाघोरे महारोगे [1] महाग्रहे । महापदि महायुद्धे महाविग्रह-संकुले [2] । महादारिद्र्य-शमने महा-दुःस्वप्न-दर्शने [3] । महाशांतौ महावश्ये [4] महा-स्वस्त्ययने तथा । घोराभिचार-शमने [5] घोरोपद्रव-नाशने । कूट-युद्धादि-शमने [6] कूट-शत्रु-निवारणे [7] । राजादि-भय-शान्तौ च राज-क्रोध-प्रशान्तये [8] । न ददाति बलिं यस्तु शिवायै शिवतालये [9] । स पापिष्ठो नाधिकारी कुल-देव्याः समर्चने [10] ।

कुलीनं नावमन्येत कुलज्ञं [11] परिपूजयेत् । कुलज्ञेषु प्रसन्नेषु [12] कालिका-सन्निधि [13] र्भवेत् । अहो धन्यवतां [14] लोके जानाति [15] कुल-दर्शनं । तेषां मध्ये तु यः कश्चित् [16] कुल देवीं समर्चयेत् । कुलाचार-विहीनो यः पूजयेत् कालिकां नरः । स स्वर्ग-मोक्ष-भागी च न स्यात् सत्यं न संशयः ।

पाठ-भेद—१ महारोगे महोत्पाते महादोषे; महारोगे महादोषे; महादोषे, २ संकुल-सग्रहे; निग्रह-संकुले, ३ दुःख-प्रदर्शने, ४ बल्ये; बाल्ये, ५ घोरा-भिगमने घोरे, ६ युद्धाभिगमने, ७ निपातने, ८ राजोपद्रव-नाशने, ९ तृप्तये, १० स पापिष्ठो न लज्जेत् कुल-देव्याः समर्चने; स पापिष्ठस्तु लज्जेत कुल-देव्याः प्रपूजने, ११ देवी-वत्, १२ कुलजेषु, १३ सन्निधौ, १४ भाग्यवतां; धन्यतरा, १५ तथेति; जानन्ति, १६ ऽपि यः कोऽपि ।

आयुरारोग्यमैश्वर्यं बलं पुष्टिं महद्-यशः । कवित्वं भुक्ति-मुक्ती च कालिका-पाद-पूजनात् । शुक्लेन ध्यान-योगेन कविता [1] वश-वर्तिनी । पीतेन ध्यान-योगेन स्तम्भये[2] दखिलं जगत् । कृष्णाभा शत्रु-मरणे धूम्राभा[3] वैरि-निग्रहे । अनया विद्यया मन्त्री स्पृशेत् पातकिनं यदि । स तु सस्पर्श-मात्रेण वक्ति सौधीमनर्गलां [4] । कुमारी-पूजनं कुर्यात् सर्व-धर्म [5] फलाप्तये ।

भैरव उवाच—अथान्यत् संप्रवक्ष्यामि प्रयोगं शत्रु-निग्रहं । सर्वान्ते वह्नि-वनितां योजयित्वाऽयुतं जपेत् । कालिकां [6] द्विभुजां कर्तृ-कपाले सव्य-दक्षिणे [7] । एवं ध्यात्वा तु शत्रूणां मारणं समुपाचरेत् [8] ।

एवं काली-मतं प्रोक्तं सर्व-सिद्धि-प्रदायकं [9] । अनया विद्यया सम्यक् साधयेत् स्वमनीषितं । अनया विद्यया यद्-यन्न साधयति[10] साधकः । तत्तत् सर्वेषु तन्त्रेषु नास्ति सत्यं न संशयः ।

काल-नियन्त्रणात् काली ज्ञान-तत्त्व-प्रदायिनी[11] । तस्मात् सर्व-प्रयत्नेन यजेदुभय[12] सिद्धये । काली-मतमिदं दिव्यं भैरवेण प्रकाशितं । न कुत्रापि प्रवक्तव्यं साधते च [13] स्वपौरुषं । एतत्तन्त्रं च मन्त्रं च ध्यानं चैव प्रपूजनं ।

एकादश पटल का सारांश

काली की साधना से समस्त विपदायें दूर होती हैं। महोत्पात, महाभय, दारुण ग्रह-दोष, महाविपत्ति, महायुद्ध, दारिद्र्य, दुःस्वप्न-दर्शन इत्यादि दोषों की शान्ति के लिये और वश्यकर्म, स्वस्त्ययन, अभिचार-प्रशमन, उपद्रव-नाश, युद्ध-शान्ति, शत्रु-निवारण, राज्य-भय-शान्ति तथा राज-कोप-शान्ति आदि के

पाठ-भेद—१कालिका, २ वशये, ३ कृष्णेन शत्रुशमनं धूम्राभं; कृष्णाभां शत्रुमरणे धूम्राभां, ४ वह्नि-सौधीं निराकुलं; मुक्ति-सौख्यमनर्गलं, ५ कर्म, ६ कपिलां, ७ दक्षिणां, ८ समुदाहृतं, ९ सिद्धिरनुष्ठितं; सिद्धेरनुष्ठितं, १० धारयति, ११ प्रदर्शिनी, १२ दभय, १३ साधकेन ।

प्रकाशात् सिद्धि-हानिः स्यात् तस्माद् यत्नेन गोपयेत् । तस्मात् सर्व-प्रयत्नेन गोप्तव्यं देवता-गणैः [1] । यथा मनुष्यो लभ्येत[2] तथा कार्यं महेश्वरि । यो भक्तः साधयेद् ज्ञानी तस्मै नित्यं[3] प्रकाशयेत् ।

॥ श्री काली-तन्त्रे सामान्य-साधनं नाम एकादशः पटलः ॥

हेतु साधक को शिवा-बलि प्रदान करनी चाहिए। जो साधक मङ्गल कामना से शिवावलि प्रदान नहीं करता, उसे कौल मार्ग से देवी-पूजा करने का अधिकार नहीं होता।

कौल साधक की उपेक्षा न करे, अपितु उसकी पूजा करे। कौल के प्रसन्न होने से काली का सान्निध्य प्राप्त होता है। जो कौल मार्ग को जानकर तदनुसार देवी की अर्चना करता है, वह धन्य है। कौल-मार्ग के अतिरिक्त विधि से काली की पूजा करने से मोक्ष प्राप्त नहीं होता। काली-पूजा से आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य, बल, पुष्टि, यश, कवित्व, भोग और मोक्ष—ये सब मिलते हैं।

कवित्व-शक्ति पाने के लिये देवी को शुक्ल-वर्णा, स्तम्भन में पीत-वर्णा, मारण में कृष्ण-वर्णा और शत्रु-निग्रह में धूम्र-वर्णा ध्यान करे। सब धर्मों का फल पाने के लिये कुमारी-पूजा करे।

काल का नियन्त्रण करने से 'काली' नाम से जगदम्बा विख्यात हुई हैं। ये ज्ञान-तत्व-दायिनी हैं। भोग और मोक्ष उभय कामना-सिद्धि के लिए इनकी आराधना करे।

पाठ-भेद—१ हि त्वया प्रिये, २ मर्त्यो न लभते; ह्यन्यो न लभते, ३ साधको मन्त्री तस्मै सत्यं; साधको ज्ञानी तस्मै ज्ञानं; साधको ज्ञानी तस्मै नित्यं ।

द्वादशः पटलः

परम गुह्याचारः

भैरव उवाच—त्वयोक्तं पूजनं देव साधनेन पुरस्कृतं । इदानीं श्रोतुमिच्छामि वीर-नित्य-क्रियां प्रभो ।

भैरव्युवाच—प्रातःकृत्यं ततो न्यास ऋष्याद्यङ्गांगुलैरपि । वर्ण-व्यापक-विन्यासः पीठ-न्यासस्ततः परं । ततोऽन्तर्यजनं देवि योगि-योगानिशा प्रिये । पञ्चमानां प्राशनं च जपो रात्री विधानत । स्तोत्र-पाठो यत्र तत्र समये च वरानने । वीर-श्रद्धा तर्पणं च तथालाप: स्त्रियामपि । विजयाङ्गीकृतिश्चैव स्व-सुखोद्देशिनं तथा । अप्रकाशः कुलाचारे मृदु-भाषा च सर्वतः । गुर्वनुज्ञा-मात्रेणैव सर्वाचार-विधिः प्रिये ।

एवमादीनि चान्यानि वीर-निन्दा न सुव्रते । ऐति परम्परया ह्येन च रुद्रा देवि तच्चीने प्रतिष्ठितं । अन्यत्र विषयेन्नास्ति सत्यमेतद् ब्रवोमि ते । वामाचारः कुलाचारश्चीन-नाथेन शङ्करात् । प्रकाशितः शङ्करेण महारुद्रात् प्रकाशितः । महाचीनाधिपो देवो माहात्म्येन तयोर्द्वयोः । कुलाचारं कुल-श्रेष्ठे वामाचारः प्रयत्नतः । अस्यैवाशेष-माहात्म्यं चीन-तन्त्रे मयोदितं । कुलाचार-मशेषेण चीन-नाथेन वेत्त्यपि ।

यद् यद् दृष्टं श्रुतं यद् यद् गुरुः साधक-वक्त्रतः । तत्तत् कार्यं वीरवर्यैस्तेन सिद्धिर्भवेत् प्रिये । क्वचिच्चण्डः क्वचिद्रुण्डः क्वचिद्-भूतपिशाच-वत् । क्वचिद्-देवार्च्चन-रतः क्वचित्तन्निन्दकस्तथा । भवेच्छील-रतो वीरो महारुद्रस्य शासनात् ।

29025

भक्षणं च विधिं वक्ष्ये पञ्चमादेर्यथा विधि । आदौ गुरुं स्मरन् पश्चात् कुण्डलीं परिभाव्य च । आजिह्वान्तस्तर्पणेन भक्षयेन्नति-पूर्वकं । गुरुं नत्वा तपोज्येष्ठं शक्तेर्नति-परायणः । ज्येष्ठत्वं वा कनिष्ठत्वं कुलाचार-विधानतः । अभिषेक्ता गुरुः साक्षान्मन्त्रदेन समः स्मृतः । अभिषेके विना भूते प्रधानत्वं करोति यः । चत्वारि तस्य नश्यन्ति आयुर्विद्या यशो बलं । तद्विधिश्चोत्तरा-तन्त्रे पाशवेन विमिश्रित । वीरैर्ग्राह्यः प्रयत्नेन हंसैः क्षीरं जलाद् यथा । आचारोऽयं शक्ति-मन्त्रे सर्वत्र परि-कथ्यते ।

विशेषात् कालिका तारा भैरव्यादिषु पञ्चसु । कालिका-तारिणी-भेदं यः करोति स नारकी । यत्र यत्र कालिकेति नाम संश्रूयते प्रिये । तत्र तारा विधानं च युते नात्र संशयः । यद् यदन्यत् साधनं च नान्यत्रापि नोदितं । तत् सर्वं पूर्व-पूर्वेण तन्त्रेण ज्ञायते प्रिये । न पूजा न्यास-जालं वा स्तोत्रं केवल-जापत सिद्धिर्भवति देवेशि कुलाचार-विधानतः ।

द्वादश पटल का सारांश

वीर साधक को प्रतिदिन प्रातःकृत्य करने के बाद ऋष्यादि-न्यास, अङ्गन्यास, वर्ण-व्यापक-पीठन्यास कर अन्तर्यजन करना चाहिये। रात्रि में पञ्चमकार-युक्त जप-साधना करनी चाहिये। स्तोत्र-पाठ जब समय मिले, तभी करना चाहिये। वीरों के प्रति श्रद्धा रखनी चाहिये। तर्पण, स्त्रियों के साथ बातचीत और विजया-ग्रहण में रुचि होनी चाहिये।

कुलाचार में गोपनीयता का भाव रखे, मृदु भाषा सदा बोले और सदा गुरु की आज्ञा का पालन करे। वीरों की कभी निन्दा न करे। वामाचार और कुलाचार का माहात्म्य असीम है। प्रयत्नपूर्वक उसी में तत्पर रहना चाहिये ।

अथ चेत् क्रियते न्यासस्तदा शृणु विधिं प्रिये। ऋष्याद्यङ्क-पीठानां न्यासं कृत्वा च संस्मरेत्। ततः साहमिति ध्यायेन् महाचीन-मतं यथा। काली-तन्त्रं कौल-तन्त्रं तारा-तन्त्रं तथा प्रिये। चीन-तन्त्रं स्वतन्त्रं च युगपद्वक्त्रतः स्मृतं। अथ यद्यन्मतं प्रोक्तं तत्पश्चसु समाचरेत्। गुरु-पाद-प्रसादेन शुभादृष्टस्य योगतः। आचारः प्राप्यते वीरैर्नात्र कार्यश्च संशय। तदैव तुष्टा देवी निर्विकल्पः स्वयं यदि।

॥ इति श्री काली-तन्त्रे परम-गुह्याचारः नाम द्वादशः पटलः ॥

पहले गुरु का स्मरण करे। फिर कुण्डलिनी का ध्यान करे कि वह जिह्वा के अग्रभाग में आकर विराजमान है। तब उसे नमस्कार करते हुये गुरुदेव और ज्येष्ठ साधकों तथा शक्ति को प्रणामपूर्वक तर्पण-चर्वण करे।

अभिषिक्त वीर को मन्त्र-दाता गुरु के समान समझे। अभिषेक हुये बिना जो प्रधानता स्वीकार करता है, उसे आयु-विद्या-यश और बल इन चारों की हानि सहनी पड़ती है।

सभी शक्ति-मन्त्रों के सम्बन्ध में इसी प्रकार आचार विहित है। कालिका, तारा, भैरवी आदि की उपासना में इसका विशेष महत्व है। काली और तारा में भेद माननेवाला नरक का भागी होता है।❀

❀ यह पटल 'काली-तन्त्र' की एक दुर्लभ प्रतिलिपि में दृष्टिगत हुआ है। अन्य प्रतिलिपियों में एकादश पटल में ही इस 'काली-तन्त्र' की समाप्ति मिलती है। इसी कारण इसके सम्बन्ध में पाठान्तरों का अभाव है। बँगला संस्करण में इसका अर्थ भी नहीं प्रकाशित किया गया।

यहाँ यह उल्लेख करना उचित होगा कि बँगला संस्करण काली-तन्त्र

साधिका स्त्री को पूजा, न्यास-जालादि करने की आवश्यकता नहीं। वह कुलाचार-विधि से केवल जप मात्र द्वारा सिद्धि प्राप्त कर सकती है। यदि वह न्यासादि करना चाहती है, तो उसकी विधि यह है कि ऋष्यादि, अङ्ग, पीठन्यास करके ध्यान करे। तब 'वह मैं ही हूँ' (साऽहम्) अर्थात् 'मैं जगदम्बा-स्वरूपा हूँ' ऐसी भावना करे। निर्विकल्प होने पर ही देवी की कृपा प्राप्त होती है।

की निम्न हस्तलिखित पाण्डुलिपियों के आधार पर प्रकाशित किया गया था—

१ धानुका-निवासी श्री पार्वतीचरण शास्त्री द्वारा प्रदत्त तीन पाण्डुलिपियाँ

२ संस्कृत साहित्य परिषद, कलकत्ता की अपनी एक पाण्डुलिपि

इन चार पाण्डुलिपियों के अतिरिक्त यदि किन्हीं महानुभाव के पास 'काली-तन्त्र' की हस्तलिखित कोई प्रति हो, तो वे कृपया उसे हमें भेजने का कष्ट करेंगे। इससे अगले संस्करण में हम उसका भी उल्लेख कर सकेंगे।—सं०

ms.
294.551 S562K

परिशिष्ट

'क्रीं'-वीजे शशि-शेखरे धन-कुचि श्यामे त्रिनेत्रे शिवे ।
खड्ग-च्छिन्न - शिरो-वराभय-करे भो मुण्ड-माल-प्रिये ।।
प्रत्यालीढ-पदे शवोपरि महाकालेन सार्द्धं रते ।
आत्मायस्व दिगम्बरि स्मित-मुखि श्रीदक्षिण-कालिके ।।

भगवती दक्षिण-कालिका का उक्त ध्यान पूज्य स्वामी सदाशिव तीर्थ के हस्ताक्षरों में उनसे प्राप्त 'काली-तन्त्र' की प्रति के प्रारम्भ में अङ्कित है। इस ध्यान के द्वारा श्री जगदम्बा के दिव्य स्वरूप को हृदयङ्गम करने में साधकों को सहायता मिलती है। इसी प्रकार 'तन्त्रसार' में भगवती के मन्त्र की जो व्याख्या दी गई है, उससे मन्त्रार्थ को समझना सरल हो जाता है। व्याख्या इस प्रकार है—

'क्रीं'-कारो मस्तकं देवि 'क्रीं'-कारश्च ललाटकम् ।
नेत्र-त्रयश्च 'क्रीं'-कारो 'हूँ'- कारेण च नासिका ।।
'हूं'-कारो मुख- पद्मं स्यात् 'ह्रीं'-कारः कर्ण-युग्मकम् ।
'ह्रीं'-कारेण भवेद् ग्रीवा 'द'-कारश्चिबुकं भवेत् ।।
'क्षि'-कारेण भवेद् दन्तो 'णे'-कारेनोष्ठ-युग्मकम् ।
'का'-कारेण स्तन-द्वन्द्वं 'लि'-कार पृष्ठ-देशकः ।।
'के'-कारेण भवेद् बाहुः 'क्रीं'-कारेणोदरं भवेत् ।
'क्रीं'-कारो नाभि-देशः स्यात् 'क्रीं'-कारश्च नितम्बकः ।।
'हूँ'-कारो योनि-रूपः स्यात् 'हूं'-कारेणोरु-युग्मकम् ।
'ह्रीं'-कारो जानु-युग्मं स्यात् 'ह्रीं'-कारो गुल्फ-देशकः ।।
'स्वा'-शब्देन पद-द्वन्द्वं 'हा'-शब्दैर्नखवरं तथा ।

———

29025